श्री विश्वशान्ति

विश्व के भाग्य को उदय करने वाला

योगसिद्ध ब्रह्मज्ञान

(भाग २)

श्री विश्वशान्ति

(भाग २)

इस ग्रन्थ को एक बार पठन करने वाले भी हजारों के धन की हानि से बचकर लाभ का अनुभव करेंगे।

श्री ग्रन्थ परिचय

भगवन् ! श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ (भाग १) दैनिक पाठ हेतु १४४ पृष्ठों में प्रकाशित कराया गया है। मासिक पाठ हेतु (भाग २) आपके कर कमलों में अर्पण है।

श्री प्रकाशन सेवा का ज्ञान

श्री सन् १९४८ से १९७५ तक समस्त प्रकाशन ६,०७,००० की संख्या से श्री विश्वशान्ति आश्रम द्वारा सभी प्रान्तों की व्यापक सेवा हुई है (✽)।

मूल्य सेवा का ज्ञान

☞ आप अपना अहोभाग्य समझकर, श्री ग्रन्थ स्वीकार करें और देश कल्याण हेतु अर्थ प्रदान करें (†)।

(✽ †) श्री सेवामय जी भगवन् ! देश के छात्र-छात्राओं को सदाचारी बनाने के उद्देश्य से मनीआर्डर द्वारा मासिक सेवा प्रदान करते रहने की पूजा है। गुणवान् विद्यार्थी ही आपके सहित देश का भाग्य उदय करने में सामर्थ्यवान् होंगे।

श्री विषय-सूची

विवरण पृष्ठ संख्या

श्री दिव्य सन्देश

सुहृदता गुण युक्त समता और प्रसन्नता के अनुरागी श्री ध्यानमग्न मानव हैं बड़भागी ।

ॐ आनन्दमय भगवान् की कृपा से मुझे अति प्रेम और प्रसन्नता के साथ मानव मात्र की सेवार्थ पूर्ण आनन्द-शान्ति और पूर्ण शक्ति-मुक्ति दायक दिव्य सन्देश देने का सुअवसर प्राप्त हुआ है, श्री ध्यानयोग-सेवायोग दायक महापुरुष देव के प्रेम प्रभाव से मैं धन्य हूँ । अस्तु,

सेवा में प्रार्थना है कि आनन्द-शक्ति युक्त आठ सिद्धियों की प्राप्ति हेतु और चिन्ता-क्रोध युक्त दुःख-अशान्ति वर्द्धक आठ असिद्धियों की निवृत्ति हेतु श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ (भाग १) १४४ पृष्ठों में प्रकाशित है और श्रद्धा करने योग्य शेष ज्ञान भाग (२) के नाम से आपके कर कमलों में अर्पण है ।

भगवन् ! जिस आत्मिक आनन्द-शक्ति का उल्लेख हमारे प्राचीन ग्रन्थों में है और जिसे प्राप्त करने की अभिलाषा से दूर देशों के, ऐश्वर्य और सौन्दर्य को भोगने वाले, धुरन्धर वैज्ञानिक लोग भी भारत की ओर आकर्षित

होते हैं, उसी आत्मिक आनन्द-शान्ति और शक्ति की प्राप्ति का सुगम मार्ग बतलाने वाला यह श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ हिन्दी भाषा में प्रकाशित है।

मन को सम, शान्त और प्रसन्न कर आत्मिक आनन्द में मग्न करने के समान कोई दूसरी आनन्द-शक्ति दायनी विद्या विश्व में नहीं है।

स्मृति रहे! मानसिक शान्ति के प्रभाव से ही सम्पूर्ण ज्ञान और शक्तियों का सुगमता के साथ विकास होना सम्भव है।

विचारशील भगवन्! लेखनी द्वारा इन ग्रन्थों का अधिक माहात्म्य न लिखकर आप से विनय पूर्वक प्रार्थना करता हूँ कि आप भाग (१) के पृष्ठ १३ से १६ तक प्रकाशित नियमानुसार श्री ग्रन्थों का अध्ययन करें और परिवार सहित अपने को आनन्द सम्पन्न, गुण सम्पन्न, ज्ञान सम्पन्न व शक्ति सम्पन्न बनाकर यथा शक्ति देश को उन्नतशील बनाने का प्रयत्न करें।

भगवत् विधान से पूर्ण श्री दिव्य ग्रन्थों के पठन से धर्म-अधर्म विषयक जानकारी की अभिलाषा सदा के लिए पूर्ण हो जाती है अर्थात् पाप-पुण्य विषयक और कुछ जानना शेष नहीं रहता।

मेरा अनुभवपूर्ण विश्वास है कि जो मानव इन दिव्य ग्रन्थों में प्रकाशित गुण-ज्ञान को हृदय रूपी अलमारी में संग्रह नहीं करते हैं, उन अहंता और ममता के उपासकों को श्री न्यायकारी प्रभु जी चिन्ता-क्रोध आदि मानसिक अग्नियों द्वारा आजीवन उबालते रहते हैं। सद्गुण रहित मनुष्यों को श्री प्रभु जी सदैव ही नाराज़ रखने हैं।

वेदना बाहरी शरीर के विकारों को सूचक है और चित्त की नाराज़गी भीतरी शरीर के पापों को बोधक है।

स्मृति रहे ! चित्त में नाराज़गी और क्रोध का होना ॐ आनन्दमय प्रभु पिता का भयानक दण्ड विधान है जो समस्त दुःख-अशान्तियों का मूल कारण है।

समाधियोग युक्त चित्त की प्रसन्नता और समता ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के परमपद के लक्षण हैं जो पूर्ण आनन्द और पूर्ण शक्ति दायक हैं।

प्रिय बन्धु ! ॐ आनन्दमय प्रभु पिता की जेल से मुक्त होने का और परम पद की प्राप्ति करने के विधान का पूर्ण ज्ञान श्री विश्वशान्ति नामक इन दो ग्रन्थों में प्रकाशित है। ॐ शान्तिमय . . . .

विश्व शुभचिन्तक—

ध्यानमग्न आत्मा

श्री ध्यानयोग और सेवायोग के प्रभाव का ज्ञान

प्रश्न—भगवन्! श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ (भाग १) के पृष्ठ १३ से १६ तक प्रकाशित गुण वर्द्धक ज्ञान को धारण करने से क्या-क्या लाभ होते हैं?

अनुभव पूर्ण उत्तर—

(१) सुख-शान्तिदायक श्री सज्जनों का संयोग और दुःख-अशान्ति दायक दुर्जनों का वियोग होता है।

(२) उत्तम जल-वायु वाले देश में निवास होता है।

(३) अन्न, वस्त्र, धन, भवन, जल आदि सात्त्विक प्रेमी-पदार्थ यथा समय आवश्यकतानुसार प्राप्त होते हैं।

(४) शरीर में रोग होने पर चिन्ता और भय दायक अशान्ति नहीं होती (*)।

(*) रोगावस्था में औषधि का सेवन न करना, दिगम्बर रहना, अग्नि तपना, विभूति रमाना, केश बढ़ाना, नशीले और विषैले पदार्थों का सेवन करना, भोजन-वस्त्र के लिए

घूमते रहना अथवा मानव सेवा के अतिरिक्त तपस्या के नाम से किसी प्रकार शरीर को कष्ट देना इत्यादि आचरण श्री गीता विधान के विरुद्ध हैं। ऐसा करना तामसी साधुओं का ज्ञान है। इस प्रकार के कामी, क्रोधी, लोभी, अकर्मण्य, प्रमादी और स्वांगी वाचाल साधु-संन्यासियों का श्री भगवद् विधान से राज कार्यकर्ता पण्डितों द्वारा दमन हो रहा है।

भगवान-भगवान जपना, देश की सम्पत्ति ठगना,
क्या यह धर्मात्माओं का लक्षण है?

---

(५) शरीर हल्का और मन शान्त रहता है।

(६) हृदय में आत्मिक आनन्द और आत्मिक शक्ति की वृद्धि होती है।

(७) सेवा कार्य करने में उत्साह और प्रसन्नता बनी रहती है।

(८) समाज के साथ प्रेम पूर्वक उत्तम व्यवहार होता है।

(९) शरीर में तामसी मनुष्यों के सदृश हार-थकावट तथा हृदय में घबराहट नहीं होती।

(१०) मानसिक रोगों (*) की निवृत्ति होकर मानसिक अरोग्यता रहती है।

(*) १२५ मानसिक रोगों को शान्त करने का ज्ञान श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ (भाग १) में 'श्री मानसिक चिकित्सा का ज्ञान' नामक लेख में प्रकाशित है।

(११) अन्तः शरीर के आहार-व्यवहार, रोग, औषध एवं चिकित्सा (*) का ज्ञान होता है ।

(*) अन्तः शरीर की चिकित्सा का ज्ञान सम्पूर्ण विद्याओं का राजा है ।

---

(१२) बाहरी शरीर के आहार-व्यवहार का उत्तम ज्ञान प्राप्त होता रहता है ।

(१३) कारण शरीर के आहार-व्यवहार का ज्ञान होता है ।

(१४) महाकारण शरीर (आत्मा-परमात्मा) के प्रभाव का बोध होता है ।

(१५) श्री गीता शास्त्र के आदर्श युक्त श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ में प्रकाशित गुण वर्द्धक धर्म के पालन में अनुराग होता है और समस्त नकली धर्मों से वैराग्य होता है ।

(१६) श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु की मर्यादा भंग करने के संकल्प से हृदय में लज्जा और भय होता है ।

(१७) छः घन्टे शयन करने से शरीर स्वस्थ रहता है और बुद्धि कुशलता पूर्वक कार्य करती है ।

(१८) चेहरे पर शान्ति, प्रसन्नता, प्रफुल्लता, तेज, उज्जव-लता आदि सात्त्विक चिन्हों का प्रादुर्भाव रहता है ।

(१९) ॐ श्री महापुरुष देव के प्रेम-प्रभाव से कई घन्टे

ध्यानावस्थित बैठ कर अलौकिक आनन्द में मग्न हो जाते हैं।

ध्यानयोग और सेवायोग द्वारा ही आठ सिद्धियों (*) से युक्त अखण्ड आनन्द, स्थायी शान्ति और भगवत पद-शक्ति प्राप्त होने का विधान है।

(*) *आठ सिद्धियों का और आठ असिद्धियों का ज्ञान (भाग १) के पृष्ठ ६-७ पर प्रकाशित है।*

(२०) अनुकूल-प्रतिकूल द्वन्द्वों में समचित्त रहना सात्त्विक समझा जाता है।

(२१) हर प्रकार के स्वभावयुक्त प्रेमियों के साथ नानात्व होने पर भी अपनी विजय का अनुभव होता है।

(२२) निशाचर प्रकृति के दुर्जन मनुष्य चाहे कितना ही विरोध क्यों न करें, परन्तु ॐ आनन्दमय प्रभु की अदृश्य शक्ति के प्रभाव से अन्त में द्रोह करने वाले स्वयं पराजित होकर, श्री दुष्टदण्डदायक प्रभु के विधान से दुःखमय-अशान्तिमय हो जाते हैं (*)।

(*) *श्री ध्यानयोग अभ्यासी सज्जनों के साथ निन्दा-अपमानादि तामसी व्यवहार करने वालों को ॐ आनन्दमय प्रभु जी चिन्ता, क्रोध, भय और रुदन दायक दण्डों द्वारा पीड़ित करते हुए उन्हें नाराज़ रखते हैं।*

(२३) ध्यानयोग जनित आनन्द-शक्ति के श्रद्धालु-प्रेमीजन श्रीध्यानमग्न भक्तों का संग, सेवा, यश, मान कर सब प्रकार से उन्नत होते हैं और अज्ञानी पापात्मा द्वेष भक्ति द्वारा अपना पतन कर विनाश को प्राप्त होते हैं।

(२४) विश्व के दुःखी-अशान्त मनुष्यों को श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ में श्रद्धा कराने से उनके पुनः सुखी होने का विश्वास होता है।

(२५) राजसी, तामसी और सात्त्विक माया (*) का ज्ञान होता है।

(*) जो कुछ दृश्य दीख रहा है इसका नाम माया है। इस दृश्य के रचयिता ॐ आनन्दमय प्रभु स्वयं हैं।

---

(२६) आत्मा-परमात्मा के भेद-अभेद का ज्ञान होता है।

(२७) नाना प्रकार के मनुष्यों के गुण, ज्ञान, भाव, आचरण पहचानने की योग्यता प्राप्त होती है।

(२८) जैसे एक सिपाही को क्रमशः राष्ट्रपति पद तक पहुँचने का ज्ञान होता रहता है वैसे ही श्री विश्व-पिता ॐ आनन्दमय प्रभु के पद और परम पद को प्राप्त करने का ज्ञान होता है।

(२९) 'पिण्डे सो ब्रह्माण्डे' का ज्ञान होता है अर्थात् जो

सुख-दुःख, शान्ति-अशान्ति, ज्ञान-अज्ञान और आनन्द-शक्ति देने वाले ॐ आनन्दमय प्रभु सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त हैं, वही न्यायकारी, दयालु, प्रेमी ॐ शान्तिमय प्रभु हमारे हृदय में विद्यमान हैं।

(३०) हर समय पद-पद पर ॐ आनन्दमय प्रभु के मंगलमय विधान का ज्ञान होता है।

(३१) अनुकूल-प्रतिकूल प्रेमी-पदार्थों के संयोग-वियोग में ॐ आनन्दमय प्रभु की अहेतुक कृपा का अनुभव होता है।

(३२) ध्यानावस्था में ॐ आनन्दमय प्रभु पिता से वार्तालाप होती है।

(३३) ॐ शान्तिमय प्रभु पिता के न्याय, दया, प्रेम आदि गुणों का ज्ञान होता है।

(३४) श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, सर्वान्तर्यामी हैं इत्यादि भगवत् प्रभाव विषयक ज्ञान होता है।

(३५) ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के दण्ड और पुरस्कार का प्रतिक्षण प्रत्यक्षवत् अनुभव होता रहता है, जैसे रसना द्वारा कड़वे-मीठे रसों का ज्ञान होता है।

(३६) ॐ आनन्दमय प्रभु हर समय हृदय से ही कर्तव्य-अकर्तव्य का ज्ञान प्रदान करते रहते हैं।

(३७) दिमाग़ी ज्ञान को लिखने में और उच्चारण करने में समता-प्रसन्नता की जाग्रति रहती है।

(३८) विभिन्न कार्यों के परिणाम में पश्चाताप नहीं होता।

(३९) ॐ आनन्दमय प्रभु स्वयं हृदय में गुण, ज्ञान, आनन्द, शान्ति और शक्ति प्रदान करते रहते हैं।

(४०) जो मानव हमारी बतलाई हुई विधि अनुसार ध्यानयोग का अभ्यास आरम्भ करते हैं वे प्रथम सप्ताह में ही ध्यानयोग जनित आनन्द-शान्ति युक्त श्री भगवत् शक्ति का अनुभव कर श्रद्धालु प्रेमी हो जाते हैं (*)।

(*) यह श्री महापुरुष देव की योग शक्ति का अलौकिक व शास्त्रातीत चमत्कार है। इस आश्चर्यजनक आनन्द, शान्ति और शक्ति का अनुभव कर आप स्वयं चकित हो जाएँगे।

जो मानव श्री विश्वशान्ति (भाग १) में प्रकाशित 'श्री ग्रन्थ नियमावली' के सात नियमों के अनुसार अपने भाव-आचरणों को धारण करेगा उसके हृदय में ॐ आनन्दमय प्रभु पिता कार्य को विधिवत् करने का सर्वोत्तम ज्ञान प्रदान करेंगे, जैसे सात्त्विक भाव-आचरण धारण करने वाले साधक को प्रवृत्ति-निवृत्ति का, उपदेश दाताओं को व्याख्यान देने का, तत्त्वज्ञान लिखने वालों को

शास्त्र लिखने का, प्रजारक्षक राष्ट्रपति को प्रजा की सुव्यवस्था करने का, सेनापति को संग्राम का, वकील को वकालत विषय का, पुलिस आफिसर को शासन करने का, चिकित्सकों को रोगों के कारण और निवारण का, अध्यापक-अध्यापिकाओं को पढ़ाने का, छात्र-छात्राओं को पढ़ने का, व्यापारियों को क्रय-विक्रय का, काश्तकारों को वृक्ष, अन्न, रूई, शाक, फल, पुष्प आदि वनस्पति जन्य पदार्थों को अधिक पुष्ट, बड़े और रसमय बनाने की युक्ति तथा जल, खाद, निराई आदि के विषय का, साइन्सवेत्ताओं को साइन्स का, इंजीनियरों को मशीनरी का इत्यादि अनेक प्रकार के विभिन्न कार्यों को सर्वोत्तम विधि से करने का ज्ञान और शक्ति प्रदान करते रहते हैं (*)।

वर्तमान में जो श्रीमान् पुरुष और देवियाँ अथवा बालक-बालिकाएँ श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ के नियमानुसार संग, सेवा, जप, ध्यान और आज्ञापालन करते हैं वे सब प्रकार से सुख-शान्तियुक्त ध्यानयोग जनित आनन्द-शक्ति के ज्ञाता और दाता हो रहे हैं ‡।

(‡) स्मृति रहे ! जो भक्त शारीरिक, आर्थिक, सामाजिक उन्नतियों का और वाक् विद्वता का दर्शन-श्रवण कर प्रसन्न होता है तथा हानि होने पर अप्रसन्न होता है वह बाल बुद्धि युक्त भक्त आन्तरिक सम्पत्तियों का ह्रास करता है।*

नकली धर्मों की प्रतिष्ठा करने वाले विरोधी समाज का घोर आन्दोलन होने पर भी कई परिवार के परिवार श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ द्वारा ध्यानयोग जनित आनन्द-शक्ति के अनुभवी हुए हैं।

श्री महापुरुषों का अपरिमित गुण, ज्ञान एवं प्रभुत्व वाणी-लेखनी द्वारा अभी तक प्रकट नहीं हो सका, क्योंकि आन्तरिक आनन्ददायनी सम्पत्ति और शक्ति अनुभवगत अनिर्वचनीय है।

श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ में प्रकाशित ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के विधान को धारण करने से हुआ—

आनन्दमय जीवन हमारा,
शान्तिमय जीवन हमारा,
सुखमय जीवन हमारा,
प्रेममय जीवन हमारा,
सेवामय जीवन हमारा,
ध्यानमय जीवन हमारा,
ज्ञानमय जीवन हमारा'
शक्तिमय जीवन हमारा।
ॐ शान्तिमय

श्री ध्यानयोग की विधि

ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति (श्री गीता अ० १३/२४)
योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः (योगदर्शन १/२)

कोमल आसन्न पर सुख पूर्वक बैठकर अपनी कमर, ग्रीवा और सिर को सीधा रखना तथा नेत्रों को बन्द करके ज्ञान नेत्रों द्वारा श्री इष्ट भगवान् के स्वरूप पर प्रेम पूर्वक मन को लगाने का अभ्यास करना, यह योग आसन की विधि है।

स्मृति रहे ! जब तक ॐ आनन्दमय प्रभु जी नेत्र बन्द करके बैठने की शक्ति प्रदान न करें तब तक खुले नेत्रों द्वारा ही श्री इष्ट भगवान् के स्वरूप को सन्मुख विराजमान करके, उनका तदाकार रूप से दर्शन करते रहना अथवा हाथों से या मन से श्री भगवान् की सेवा-पूजा का अभ्यास करते रहना चाहिए।

ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय दिव्य मंत्र के साथ-साथ श्री इष्ट भगवान् के स्वरूप को याद करने का जितना अधिक अभ्यास होगा उतना ही मन शान्त होगा।

ध्यानकाल में गीता अ० ६ श्लोक २६ के विधान अनुसार जिस-जिस उद्देश्य को लेकर मन संकल्प-विकल्प करे उससे सर्वथा वैराग्य कराकर पुनः पुनः ॐ आनन्दमय भगवान् के नाम रूप की स्मृति कराने की तत्परता के साथ चेष्टा करनी सात्त्विक है।

मानसिक सामग्रियों द्वारा विविध प्रकार से भगवान् के स्वरूप की पूजा करते रहना मन को भगवान् में लगाने का सुगम साधन है।

व्यवहारकाल में भूत-भविष्य के संकल्पों का त्याग कर, मंत्र जप के साथ-साथ ॐ आनन्दमय भगवान् के स्वरूप को याद करने का ही विशेष रूप से अभ्यास करने का विधान है।

किसी भी अवस्था अथवा परिस्थिति में श्री मंत्र जप का और ॐ आनन्दमय भगवान् के स्वरूप की स्मृति का त्याग नहीं करना है अन्यथा हृदय में पुनः राजसी-तामसी मनन-विचारों की जाग्रति होकर जीवन चिन्ता नाराज़गी युक्त दुःखी-अशान्त होना सम्भव हैं।

पूर्व संस्कार जनित और अश्रद्धा जनित संकल्पों को "श्री मानसिक चिकित्सा" (*) की विधि अनुसार बदलते

हुए, उन राजसी-तामसी भावों का निरादर करते रहने का अभ्यास करते रहना चाहिए ।

(*) 'श्री मानसिक चिकित्सा का ज्ञान' नामक लेख (भाग १) में प्रकाशित है ।

श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ (भाग १) के पृष्ठ १३ में प्रकाशित 'श्री ग्रन्थ नियमावली, के सात नियमों को सतत सावधानी के साथ पालन करते रहने का अभ्यास ही अशान्तिदायक संकटों का अन्तकर ब्रह्मानंद में मग्न रहने का एक मात्र विधान व वरदान है ।

जो मानव जितना-जितना श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ (भाग १—२) में प्रकाशित गुण वर्द्धक ज्ञान को धारण करेगा उतना-उतना ही ॐ आनन्दमय प्रभु जी उस भगवत पदाधिकारी साधक के हृदय को आनन्द-शान्ति सम्पन्न निर्मल बनाएंगे ।

दर्शन-श्रवण जन्य समस्त जड़-चेतन ॐ आनन्दमय भगवान् का ही साकार स्वरूप है अर्थात् श्री लीला विग्रह है । इस सात्त्विक भावना से मन को आह्लादित करते हुए प्रेम-प्रसन्नता में मग्न करने का अभ्यास करना । यह विधान अपने हृदय को अति शीघ्र गुण-सम्पन्न बनाने का साधन है ।

जो मनुष्य दर्शन-श्रवण जनित मानसिक संकल्पों द्वारा जितने-जितने राग-द्वेष और ममता-अहंकार के भावों को धारण करता है उतना-उतना ही ॐ श्री न्यायकारी प्रभु जी उसके हृदय को चिन्ता, भय, क्रोध और नाराज़गी वर्द्धक संकल्प रूपी बाणों द्वारा विदीर्ण करते रहते हैं।

ध्यानयोग की वृद्धि करने के अभिलाषी प्रेमीभक्त (भाग १) में प्रकाशित सात नियमों को तथा इस ग्रन्थ में प्रकाशित "सेवायोग का ज्ञान" नामक लेख के ज्ञान को धारण करें।

ध्यान योग अभ्यासी प्रेमीभक्त इस लेख में प्रकाशित विधान को मनन-विचार पूर्वक प्रत्येक माह में एक बार पठन करेंगे। ॐ शान्तिमय

सेवायोग-ध्यानयोग से अनभिज्ञ पंडित, संन्यासी, पण्डे, पुजारी आदि गुरु-वक्ताओं के मंत्र का प्रभाव और धार्मिक ज्ञान का प्रभाव कैसा ?—जाली सिक्के जैसा !

श्री योगसिद्ध महामन्त्र का प्रभाव

ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय महामंत्र का अर्थ और भावना

ॐ आनन्दमय	ॐ शान्तिमय
(१) श्री परमात्मा देव आनन्दमय !	(१) श्री परमात्मा देव शान्तिमय !
(२) श्री महापुरुष देव आनन्दमय !	(२) श्री महापुरुष देव शान्तिमय !
(३) मैं आनन्दमय !	(३) मैं शान्तिमय !
(४) सब आनन्दमय !	(४) सब शान्तिमय !

ॐ आनन्दमय मंत्र के अर्थ और भावनाओं की व्याख्या निम्नाङ्कित है ।

(१) **श्री परमात्मा देव आनन्दमय**—श्री विश्व पिता ॐ आनन्दमय प्रभु निराकार रूप से सर्वव्यापी व सर्वत्र हैं और वे आनन्द के समुद्र हैं, अत: ॐ आनन्दमय मंत्र का जप करते हुए अपने को ऐसा माने कि मैं सदा-सर्वदा आनन्दमय समुद्र में निवास करता हूँ ।

ऐसी भावना का अभ्यास करते रहने से अपने में आनन्द की वृद्धि होती रहेगी।

(२) **श्री महापुरुष देव आनन्दमय**—साकार रूपों में श्री महापुरुष देव ही आनन्दमयस्वरूप हैं अतः मन-वाणी से ॐ आनन्दमय मंत्र उच्चारण के साथ-साथ बुद्धि से श्री महापुरुष देव के श्री विग्रह को स्मरण करते रहने से अपने अन्दर आनन्द का प्रादुर्भाव होता रहेगा और क्रमशः अखण्ड आनन्द की प्राप्ति हो जायगी।

(३) **मैं आनन्दमय**—ॐ आनन्दमय प्रभु पिता का पुत्र होने के नाते मैं भी आनन्दमय ही हूँ। अतः इस प्रकार ॐ आनन्दमय महामंत्र का जप करते हुए अपनी चेतन आत्मा को "आनन्दमय" की भावना देते रहने से आप आनन्दमय ही हो जायेंगे।

(४) **सब आनन्दमय**—सभी रूपों में श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु आत्मरूप से विराजमान हैं। अतः ॐ आनन्दमय महामंत्र का जप करते हुए ऐसा माने कि सब ही आनन्दमय हैं, दुःख, शोक, अज्ञान तो लीलामात्र है। जैसे मधुमक्खी मीठे रस को ग्रहण करती है, कड़वे, खट्टे, नमकीन आदि रसों को नहीं, इसी प्रकार अपने ज्ञान से यावन मात्र जड़ चेतनादि पदार्थों में

"आनन्दमय" की भावना करने का अभ्यास करें। इस भगवत् बुद्धि युक्त सात्त्विक मनन-विचार के प्रभाव से अन्य प्राणियों के दुर्गुण-दुराचार रूपी मानसिक रोगों के विषैले कीटाणु आप के हृदय में नहीं आ सकेंगे, केवल आनन्द रूपी अमृतरस ही आता रहेगा।

ॐ शान्तिमय मंत्र के अर्थ और भावनाओं की व्याख्या निम्नाङ्कित है।

(१) **श्री परमात्मा देव शान्तिमय** — श्री विश्वपिता ॐ शान्तिमय प्रभु ही निराकार रूप से सर्वव्यापी व सर्वत्र हैं और वे शान्ति के समुद्र हैं। अतः ॐ शान्तिमय मंत्र का जप करते हुए अपने को ऐसा माने कि मैं सदा-सर्वदा शान्तिमय समुद्र में ही निवास करता हूँ। ऐसी भावना का अभ्यास करते रहने से अपने में शान्ति की वृद्धि होती रहेगी।

(२) **श्री महापुरुष देव शान्तिमय**—सम्पूर्ण साकार रूपों में श्री महापुरुष देव साक्षात् शान्तिमय स्वरूप हैं। अतः ॐ शान्तिमय मंत्र का मनन करते हुए मन बुद्धि से श्री समाधिमग्न श्री विग्रह को याद करते रहने से अपने अन्दर शान्ति का प्रादुर्भाव होता रहेगा और क्रमशः पूर्ण शान्ति की प्राप्ति हो जायगी।

(३) मैं शान्तिमय—ॐ शान्तिमय प्रभु पिता का पुत्र होने के नाते मैं भी शान्तिमय ही हूँ। अतः इस प्रकार ॐ शान्तिमय मंत्र का जप करते हुए अपनी चेतन आत्मा को शान्तिमय मानने का अभ्यास करें आप शान्तिमय हो जायेंगे।

(४) सब शान्तिमय—सभी शरीरों में एकमात्र ॐ शान्तिमय प्रभु ही विराजमान हैं अतः ॐ शान्तिमय मंत्र का जप करते हुए ऐसा माने कि सब ही शान्तिमय हैं।

मीठे रस को लेने वाली मधुमक्खी के सदृश सब रूपों में ॐ शान्तिमय प्रभु का ही दर्शन करने का अभ्यास करें, अभ्यास दृढ़ होने पर आपके हृदय में शान्ति की बाढ़ आती रहेगी और क्रमशः आपकी हृदयस्थ आत्मा शान्तिमय हो जायगी।

ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय महामंत्र का जप करते हुए उपरोक्त विधि से सात्त्विक ज्ञान की स्मृति का अभ्यास करने से और पूर्व के कनिष्ट ज्ञान दायक राजसी-तामसी संकल्पों का त्याग करते रहने से श्री भगवत् आनन्द-शान्ति की वृद्धि होती रहेगी।

प्रश्न—भगवन्! आप ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय मंत्र का ही जप क्यों बतलाते हैं?

उत्तर—

(१) यह महामंत्र 'ब्रह्मवाची' व सनातन है।

(२) यह मंत्र वेद-वेदान्त द्वारा प्रतिष्ठित है।

(३) ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय महामंत्र श्री समाधिमग्न महापुरुष देव के योगशक्तियुक्त, आनन्द-शान्ति सम्पन्न हृदय कमल से प्रकट हुआ है।

(४) ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय महामंत्र सेवायोग, ध्यान-योग और ज्ञानयोग द्वारा सिद्ध है।

(५) ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय महामंत्र के प्रचारक ध्यानयोग के ज्ञाता-दाता व साधन परायण भगवत् पदाधिकारी मानव हैं।

बालक, वृद्ध, युवा, नर-नारी।
इस मंत्र के सभी हैं अधिकारी॥

हे प्रिय आत्मन्! ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय महामंत्र परम फल दायक और मुक्ति दायक है।

मनुष्य के सच्चे भाग्य को उदय करने वाले इस युगल मंत्र का निरन्तर जप करने से अशान्तिदायक सम्पूर्ण दुःखों का नाश होता है। चलते-फिरते, खाते-पीते, शारीरिक, सामाजिक एवं आजीविकार्थ सम्पूर्ण कर्म करते हुए हर समय इस परम पवित्र नाम का जप करने से प्रतिदिन परम आनन्द और परम शान्ति की वृद्धि होती है और मनुष्य ॐ आनन्दमय प्रभु पिता की कृपा का पात्र बन जाता है।

विविध प्रकार के विघ्नकारक दोष इस पावन नाम का उच्चारण करते रहने से नष्ट होते रहते हैं। यह परम प्रभावशाली राजमंत्र प्रकृति संघर्षण रूपी युद्ध में विजय देने वाला है।

ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय महामंत्र का आश्रय लेने से दुर्गुण-दुराचारों का दिन-प्रतिदिन नाश होकर सद्गुण-सदाचारों की उत्तरोत्तर वृद्धि होती है। यह सर्वोत्तम मंत्र दुःख, चिन्ता, भय, कामना, क्रोध, लोभ, ईर्षा, द्वेष आदि मानसिक रोगों की परम औषधी है।

निम्नलिखित युक्तियों से भी समाधान करें, जैसे—

(१) काठ को काठ नहीं जला सकता, किन्तु किंचित जला हुआ काठ भयानक जंगल को भस्म करने में समर्थ होता है। ऐसे ही श्री महापुरुष देव का स्वानुष्ठान युक्त ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय महामंत्र सम्पूर्ण अशान्तिदायक दुःखों को भस्म करने में समर्थ है। यह हजारों प्रेमी भक्तों का प्रत्यक्ष अनुभव है।

(२) जैसे मिट्टी से वस्त्र साफ नहीं होता किन्तु शुद्ध सोडा-सज्जी मिट्टी वस्त्रों को शुद्ध कर देती है, ऐसे ही ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय विशुद्ध महामंत्र अन्तःकरण को अतिशीघ्र शुद्ध कर देता है, किन्तु ध्यानयोग जनित

आनन्द-शक्ति रहित कामी-क्रोधी गुरुओं के मंत्र वर्षों तक रटने पर भी मन शुद्ध नहीं होता।

(३) हे प्रिय आत्मन्! लोहे को लोहा नहीं काट सकता, किन्तु लोहे की आरी घन लोहे को काट कर खण्ड-खण्ड करने में समर्थ होती है। ऐसे ही मर्यादा पुरुषोत्तम श्री महापुरुष देव का समाधियोग द्वारा सिद्ध 'ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय' महामंत्र मन के राजसी-तामसी संकल्पों को काटने में समर्थ है। इसे हर समय रटन कर अनुभव करिए, प्रथम महीने में ही आपके हृदय में आनन्द-शान्ति व प्रेम-प्रसन्नता की वृद्धि होगी और नेत्र बन्द करके भजन ध्यान करने की शक्ति प्राप्त होगी।

(४) हे प्रिय आत्मन्! तोप का गोला शक्तिशाली तोप के मुख से ही अपना प्रभाव दिखाता है, हाथ से नहीं। ऐसे ही ब्रह्मदर्शी श्री समाधिस्थ महापुरुष देव के मुखारविन्द के योगसिद्ध मंत्र तथा भगवत् मर्यादा के ज्ञान को धारण करने से ही तमोगुणी और रजोगुणी संस्कारों का दमन होकर आनन्द-शक्तिदायक सत्त्वगुणी संस्कारों की जाग्रति होती है, समाधि रहित गुरुओं के मंत्र एवं ज्ञान से नहीं। क्या ध्यानयोग जनित आनन्द-शान्ति रहित गुरुओं के संग, सेवा, भक्ति से आज तक किसी का ध्यान लगा अथवा

चिन्ता, क्रोध, नाराज़गी आदि १२५ दिमागी रोग शान्त हुए ? यदि नहीं तो वह मंत्र जाली सिक्का है।

(५) हे प्रिय आत्मन् ! जो अध्यापक स्वयं शिक्षा-रहित है वह दूसरों को कैसे पढ़ा सकता है ? ऐसे ही केवल शास्त्र कंठस्थ करने वाले, स्वयं तमोगुण-रजोगुण के आचरणयुक्त, धन, मान, भोगों में ही श्रद्धा रखने वाले नाममात्र के उपदेशकों के मंत्र तथा उपदेश से किंचित भी मन की एकाग्रता रूप आनन्द-शान्ति दायक ध्यानयोग का लाभ नहीं होता, किन्तु ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय योगसिद्ध महामंत्र का जप करने से तथा श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ में प्रकाशित ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के विधान को धारण करने से छात्र-छात्राओं सहित नारी-नर ध्यानमग्न होते हैं।

'राजा की कलम और महात्मा का वचन'

पदाधीश की कलम से तो कुछ समय तक और अपने ही जिले व प्रान्त में कार्य सिद्ध होता है किन्तु ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के युवराज पद प्राप्त समाधिमग्न समतावान् महापुरुषों का मंत्र एवं श्री भगवत् मर्यादा का ज्ञान सर्वत्र सुख, शान्ति, आनन्द, शक्ति और गुण, ज्ञान प्रदान करता रहता है।

श्रद्धा-विश्वास युक्त समाधान के लिए गीताप्रेस द्वारा प्रकाशित निम्नाङ्कित श्री ग्रन्थ पढ़ें—

(क) श्री गीता तत्त्वविवेचनी अ० ५/१७ पृष्ठ २३५ तथा अ० ६/२० पृष्ठ २७१।

(ख) मनुष्य जीवन की सफलता—पृष्ठ ३४३ से ३५१ 'परमात्मा के आनन्दमय स्वरूप का ध्यान'।

(ग) श्री तत्त्वचिन्तामणि भाग १ पृष्ठ ५६, १६६; भाग ५ पृष्ठ ३८४; भाग ६ पृष्ठ ४४१ में देखें।

(घ) प्राचीन प्रमाण के लिए वेदान्त-दर्शन (ब्रह्मसूत्र) (भाष्य—गीता-प्रेस) अ० १/१/१२ से १६ तक की व्याख्या तो निम्नाङ्कित है और अ० ३/३/१४ से १८ एवं पृष्ठ २५६, २५७ पर श्री वेदान्त-दर्शन (ब्रह्मसूत्र) ग्रन्थ में ही देखें।

तैत्तिरीयोपनिषद् की ब्रह्मानन्दवल्ली में सृष्टि की उत्पत्ति का वर्णन करते हुए सर्वात्मस्वरूप परब्रह्म परमेश्वर से ही आकाश आदि के क्रम से सृष्टि बतायी गयी है। (अनु० १,६,७)। उसी प्रसंग में अन्नमय, प्राणमय, मनोमय, विज्ञानमय और आनन्दमय इन पाँचों का वर्णन आया है। वहाँ क्रमशः अन्नमय का प्राणमय को, प्राणमय का मनोमय को, मनोमय का विज्ञानमय को और

विज्ञानमय का आनन्दमय को अन्तरात्मा बतलाया गया है। आनन्दमय का अन्तरात्मा दूसरे किसी को नहीं बताया गया है; अपितु उसी से जगत् की उत्पत्ति बताकर आनन्द की महिमा का वर्णन करते हुए सर्वात्मा आनन्दमय को जानने का फल उसी की प्राप्ति बताया गया और वहीं ब्रह्मानन्दवल्ली को समाप्त कर दिया गया है।

यहाँ यह प्रश्न उठता है कि उस प्रकरण में आनन्दमय नाम से किसका वर्णन हुआ है, परमेश्वर का ? या जीवात्मा का ? अथवा अन्य किसी का ? इस पर कहते हैं—

आनन्दमयोऽभ्यासात् ॥ १/१/१२ ॥

अभ्यासात्=श्रुति में बारंबार 'आनन्द' शब्द का ब्रह्म के लिए प्रयोग होने के कारण; **आनन्दमयः**='आनन्द-मय' शब्द (यहाँ परब्रह्म परमेश्वर का ही वाचक है)।

व्याख्या—किसी बात को दृढ़ करने के लिए बारंबार दुहराने को 'अभ्यास' कहते हैं। तैत्तिरीय तथा बृहदारण्यक आदि अनेक उपनिषदों में 'आनन्द' शब्द का ब्रह्म के अर्थ में बारंबार प्रयोग हुआ है; जैसे—तैत्तिरीयोपनिषद् की ब्रह्मवल्ली के छठे अनुवाक में 'आनन्दमय' का वर्णन आरम्भ करके सातवें अनुवाक में उसके लिए 'रसो वै सः। रसँ् ह्येवायं लब्ध्वाऽऽनन्दी भवति। को ह्येवान्यात्

कः प्राण्याद् यदेष आकाश आनन्दो न स्यात् । एष ह्येवानन्दयाति' (२/७) अर्थात् 'वह आनन्दमय ही रस स्वरूप है, यह जीवात्मा इस रस स्वरूप परमात्मा को पाकर आनन्द युक्त हो जाता है। यदि वह आकाश की भाँति परिपूर्ण आनन्दस्वरूप परमात्मा नहीं होता तो कौन जीवित रह सकता, कौन प्राणों की क्रिया कर सकता ! सचमुच यह परमात्मा ही सबको आनन्द प्रदान करता है।' ऐसा कहा गया है। तथा 'सैषाऽऽनन्दस्य मीमाँ् सा भवति,' 'एतमानन्दमयमात्मानमुपसंक्रामति।' (तै० उ० २/८) 'आनन्दं ब्रह्मणो विद्वान् न बिभेति कुतश्चन।' (तै० उ० २/६) 'आनन्दो ब्रह्मेति व्यजानात्' (तै० उ० ३/६) 'विज्ञानमानन्दं ब्रह्म' (बृह० उ० ३/६/२८)—इत्यादि प्रकार से श्रुतियों में जगह-जगह परब्रह्म के अर्थ में' आनन्द' एवं 'आनन्दमय' शब्द का प्रयोग हुआ है। इसलिये 'आनन्दमय' नाम से यहाँ उस सर्वशक्तिमान्, समस्त जगत् के परम कारण, सर्वनियन्ता, सर्वव्यापी, सबके आत्मस्वरूप परब्रह्म परमेश्वर का ही वर्णन है, अन्य किसी का नहीं।

सम्बन्ध—यहाँ यह शंका होती है कि 'आनन्दमय' शब्द में जो 'मयट्' प्रत्यय है, वह विकार अर्थ का बोधक है और परब्रह्म परमात्मा निर्विकार है। अतः जिस प्रकार

अन्नमय आदि शब्द ब्रह्म के वाचक नहीं हैं, वैसे ही, उन्हीं के साथ आया हुआ यह 'आनन्दमय' शब्द भी परब्रह्म का वाचक नहीं होना चाहिए। इस पर कहते हैं—

विकारशब्दान्नेति चेन्न प्राचुर्यात् ॥ १/१/१३ ॥

चेत्=यदि कहो; **विकारशब्दात्**=मयट् प्रत्यय विकार का बोधक होने से; **न**=आनन्दमय शब्द ब्रह्म का वाचक नहीं हो सकता; **इति**=तो यह कथन; **न**=ठीक नहीं है; **प्राचुर्यात्**=क्योंकि 'मयट्' प्रत्यय यहाँ प्रचुरता का बोधक है (विकार का नहीं)।

व्याख्या—'तत्प्रकृतवचने मयट्' (पा० सू० ५।४।२१) इस पाणिनिसूत्र के अनुसार प्रचुरता के अर्थ में भी 'मयट्' प्रत्यय होता है; अतः यहाँ 'आनन्दमय' शब्द में जो 'मयट्' प्रत्यय है, वह विकार का नहीं, प्रचुरता-अर्थ का ही बोधक है अर्थात् वह ब्रह्म आनन्दघन है, इसी का द्योतक है। इसलिए यह कहना ठीक नहीं है कि 'आनन्दमय' शब्द ब्रह्म का वाचक नहीं हो सकता। परब्रह्म परमेश्वर आनन्दघनस्वरूप है, इसलिए उसे 'आनन्दमय' कहना सर्वथा उचित है।

सम्बन्ध—यहाँ यह जिज्ञासा होती है कि जब 'मयट्' प्रत्यय विकार का बोधक भी होता है, तब यहाँ उसे

प्रचुरता का ही बोधक क्यों माना जाय ? विकारबोधक क्यों न मान लिया जाय ? इस पर कहते हैं—

तद्धेतुव्यपदेशाच्च ॥ १/१/१४ ॥

तद्धेतुव्यपदेशात्=(उपनिषदों में ब्रह्म को) उस आनन्द का हेतु बताया गया है, इसलिए; **च**=भी (यहाँ मयट् प्रत्यय विकार-अर्थ का बोधक नहीं है)।

व्याख्या—पूर्वोक्त प्रकरण में आनन्दमय को आनन्द प्रदान करने वाला बताया गया है (तै० उ० २/७)। जो सबको आनन्द प्रदान करता है, वह स्वयं आनन्दघन है, इसमें तो कहना ही क्या है; क्योंकि जो अखण्ड आनन्द का भंडार होगा, वही सदा सबको आनन्द प्रदान कर सकेगा। इसलिये यहाँ मयट् प्रत्यय को विकार का बोधक न मानकर प्रचुरता का बोधक मानना ही ठीक है।

सम्बन्ध—केवल मयट् प्रत्यय प्रचुरता का बोधक होने से ही यहाँ 'आनन्दमय' शब्द ब्रह्म का वाचक है इतना ही नहीं, किन्तु—

मान्त्रवर्णिकमेव च गीयते ॥ १/१/१५ ॥

च=तथा; **मान्त्रवर्णिकम्**=मन्त्राक्षरों में जिसका वर्णन किया गया है, उस ब्रह्म का; **एव**=ही; **गीयते**=

(यहाँ) प्रतिपादन किया जाता है (इसलिये भी आनन्दमय ब्रह्म ही है)।

व्याख्या—तैत्तिरीयोपनिषद् की ब्रह्मानन्दवल्ली के आरम्भ में जो यह मंत्र आया है कि—'सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म । यो वेद निहितं गुहायां परमे व्योमन् । सोऽश्नुते सर्वान् कामान् सह ब्रह्मणा विपश्चिता ।' अर्थात् 'ब्रह्म सत्य, ज्ञानस्वरूप और अनन्त है। वह ब्रह्म विशुद्ध आकाशस्वरूप परम धाम में रहते हुए ही सब के हृदयरूप गुफा में छिपा हुआ है। जो उसको जानता है, वह सबको भली-भाँति जानने वाले ब्रह्म के साथ समस्त भोगों का अनुभव करता है।' इस मंत्र द्वारा वर्णित ब्रह्म को यहाँ 'मान्त्रवर्णिक' कहा गया है। जिस प्रकार उक्त मंत्र में उस परब्रह्म को सबका अन्तरात्मा बताया गया है, उसी प्रकार ब्राह्मण-ग्रन्थ में 'आनन्दमय' को सबका अन्तरात्मा कहा है; इस प्रकार दोनों स्थलों की एकता के लिये यही मानना उचित है कि 'आनन्दमय' शब्द यहाँ ब्रह्म का ही वाचक है, अन्य किसी का नहीं।

सम्बन्ध—यदि 'आनन्दमय' शब्द को जीवात्मा का वाचक मान लिया जाय तो क्या हानि है ? इस पर कहते हैं—

नेतरोऽनुपपत्तेः ॥ १/१/१६ ।

इतरः=ब्रह्म से भिन्न जो जीवात्मा है, वह; **न**=आनन्दमय नहीं हो सकता; **अनुपपत्तेः**=क्योंकि पूर्वापर के वर्णन से यह बात सिद्ध नहीं होती।

व्याख्या—तैत्तिरीयोपनिषद् की ब्रह्मानन्दवल्ली में आनन्दमय का वर्णन करने के अनन्तर यह बात कही गयी है कि 'उस आनन्दमय परमात्मा ने यह इच्छा की कि मैं बहुत होऊँ; फिर उसने तप (संकल्प) किया। तप करके इस समस्त जगत् की रचना की।' (तै० उ० २/६) यह कथन जीवात्मा के लिये उपयुक्त नहीं है; क्योंकि जीवात्मा अल्पज्ञ और परिमित शक्तिवाला है; जगत् की रचना आदि कार्य करने की उसमें सामर्थ्य नहीं है। अतः 'आनन्दमय' शब्द जीवात्मा का वाचक नहीं हो सकता।

सम्बन्ध—यही बात सिद्ध करने के लिये दूसरा कारण बतलाते हैं—

भेदव्यपदेशाच्च ॥ १/१/१७ ॥

भेदव्यपदेशात्=जीवात्मा और परमात्मा को एक दूसरे से भिन्न बतलाया गया है, इसलिये; **च**=भी ('आनन्दमय' शब्द जीवात्मा का वाचक नहीं हो सकता)।

व्याख्या—उक्त वल्ली में आगे चलकर (सातवें अनुवाक में) कहा है कि 'यह जो ऊपर के वर्णन में 'सुकृत' नाम से कहा गया है, वही रसस्वरूप है। यह जीवात्मा इस रसस्वरूप परमात्मा को पाकर आनन्दयुक्त हो जाता है।' इस प्रकार यहाँ परमात्मा को आनन्ददाता और जीवात्मा को उसे पाकर आनन्दयुक्त होने वाला बताया गया है। इससे दोनों का भेद सिद्ध होता है। इसलिए भी 'आनन्दमय' शब्द जीवात्मा का वाचक नहीं है।

सम्बन्ध—आनन्द का हेतु जो सत्त्वगुण है, वह त्रिगुणात्मिका जड़ प्रकृति में भी विद्यमान है ही; अतः 'आनन्दमय' शब्द को प्रकृति का ही वाचक क्यों न मान लिया जाय? इस पर कहते हैं—

कामाच्च नानुमानापेक्षा ॥ १/१/१८ ॥

च=तथा; **कामात्**=('आनन्दमय' में) कामना का कथन होने से; **अनुमानापेक्षा**=(यहाँ) अनुमान-कल्पित जड़ प्रकृति को 'आनन्दमय' शब्द से ग्रहण करने की आवश्यकता; **न**=नहीं है।

व्याख्या—उपनिषद् में जहाँ 'आनन्दमय' का प्रसंग आया है, वहाँ 'सोऽकामयत' इस वाक्य के द्वारा आनन्दमय में सृष्टि विषयक कामना का होना बताया गया है, जो

कि जड़ प्रकृति के लिए असंभव है। अतः उस प्रकरण में वर्णित 'आनन्दमय' शब्द से जड़ प्रकृति को नहीं ग्रहण किया जा सकता।

सम्बन्ध—परब्रह्म परमात्मा के सिवा, प्रकृति या जीवात्मा कोई भी 'आनन्दमय' शब्द से गृहीत नहीं हो सकता; इस बात को दृढ़ करते हुए प्रकरण का उपसंहार करते हैं—

अस्मिन्नस्य च तद्योगं शास्ति ॥ १/१/१६ ॥

च=इसके सिवा; **अस्मिन्**=इस प्रकरण में (श्रुति); **अस्य**=इस जीवात्मा का; **तद्योगम्**=उस आनन्दमय से संयुक्त होना (मिल जाना); **शास्ति**=बतलाती है (इसलिये जड़ तत्त्व या जीवात्मा आनन्दमय नहीं है)।

व्याख्या—तै० उ० (२/८) में श्रुति कहती है कि 'इस आनन्दमय परमात्मा के तत्त्व को इस प्रकार जानने वाला विद्वान् अन्नमयादि समस्त शरीरों के आत्मस्वरूप आनन्दमय ब्रह्म को प्राप्त हो जाता है।' बृहदारण्यक में भी श्रुति का कथन है कि '(ब्रह्म को जानने वाला पुरुष) ब्रह्मरूप होकर ही ब्रह्म में लीन होता है' (बृह० उ० ४।४।६) श्रुति के इन वचनों से यह स्वतः सिद्ध हो जाता है, कि

जड़ प्रकृति या जीवात्मा को 'आनन्दमय' नहीं माना जा सकता; क्योंकि चेतन जीवात्मा का जड़ प्रकृति में अथवा अपने ही जैसे परतन्त्र दूसरे किसी जीव में लय होना नहीं बन सकता। इसलिए एकमात्र परब्रह्म परमेश्वर ही 'आनन्दमय' शब्द का वाच्यार्थ है और वही सम्पूर्ण जगत का कारण है; दूसरा कोई नहीं।

श्री दिव्य महामंत्र की महिमा

ॐ आनन्दमय तेरा नाम, ॐ शान्तिमय तेरा नाम ॥ टेक ॥
तेरा नाम तेरा ध्यान, चिन्तन करते जो निष्काम।
ॐ आनन्दमय जो कोई रटते, वे होते हैं पूर्ण काम ॥ १ ॥
मूल मंत्र जो मानें इसको, वे पावेंगे पद निर्वाण।
ॐ शान्तिमय जो जपते वे, शान्ति शाश्वत पाते नाम ॥ २ ॥
मन ही मन में जो इस जप को, रटते रहते आठों याम।
सत्य प्रतिज्ञा करता हूँ मैं, उनको मिल जायँ भगवान् ॥ ३ ॥
अर्थ सहित जो जपते हैं वे, हो जायेंगे आनन्दमय समान।
कहता हूँ कर जोर विनय से, "आनन्द" आनन्दमय
चरणरज जान ॥ ४ ॥

ॐ शान्तिमय

श्री मंत्र विद्या का रहस्य

इस दुःखमय-अशान्तिमय आसुरी संसार में सेवायोग युक्त ध्यानयोग ही आनन्द-शान्ति और शक्ति मुक्ति दायक सार तत्त्व है ।

प्रश्न—भगवन् ! भारत देश में सभी संप्रदायों के भिन्न-भिन्न धार्मिक ग्रन्थ हैं। उन ग्रन्थों के लेखकों ने अपने-अपने नाम मंत्रों की महिमा लिखी है तथा विभिन्न प्रकार के धार्मिक आचरण लिखे हैं और उनके द्वारा प्राप्त होने वाले लाभों का वर्णन किया है ।

स्वार्थी और श्रद्धालु दोनों वर्गों के मनुष्य उन ग्रन्थों का पठन-श्रवण करते हुए तदनुसार यज्ञ, तप, दान, तीर्थ, व्रत, मूर्तियों की पूजा आदि धर्मों का अनुष्ठान करते-करवाते हैं ।

करोड़ों ही भारत निवासी दीर्घकाल से भगवन्नाम मंत्र का जप तथा विभिन्न प्रकार से कथा-कीर्तन करते हैं। भारत देश में धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के दाता पण्डित, संन्यासी, पण्डा, पुजारी और मौलवी आदि गुरुओं की भी

संख्या अत्याधिक है तथा मठ, मन्दिर और मस्जिदों की भी कमी नहीं है।

धार्मिक वक्ताओं का तो कथन है कि भारत देश निवासी धर्म अनुरागी हैं और दूर देशों के लोग धर्म के त्यागी हैं। परन्तु देखा सुना जाता है कि वर्तमान काल में दूर देश निवासियों के शरीर स्वस्थ और पुष्ट हैं। उनकी अपेक्षा भारत निवासियों के शरीर रोगी और दुर्बल हैं। वे लोग दीर्घजीवी हैं और भारतवासी अल्पजीवी हैं। दूर देशी लोग भारत देश को पदार्थ प्रदान करते हैं तथा विभिन्न प्रकार के ज्ञान के दाता हैं और भारतवासी उनके ऋणी हैं।

श्री गीता विधान के अनुसार तो दूरदेशी लोग आर्थिक आय न्याययुक्त करने के कारण रजोगुणी प्रतीत होते हैं। और भारत निवासी प्रायः अन्याय से धन उपार्जन करते हैं, इसलिए तमोगुणी प्रतीत होते हैं।

भगवन्! भारत के प्रायः सभी मनुष्य शारीरिक, आर्थिक, सामाजिक, मानसिक और बौद्धिक रोगों से ग्रसित हैं। यदि यह सच्चे धर्मानुरागी हैं तो इन्हें सुख-शान्ति वर्द्धक आनन्द-शक्ति की प्राप्ति क्यों नहीं हो रही है?

धर्मानुरागी श्रोता-वक्ता और धर्म के त्यागी-वैरागी सभी लोग चिन्ता, क्रोध, ईर्षा, द्वेष परायण, कलहयुक्त,

दुःखी-अशान्त क्यों हैं ? क्या वर्तमानकाल का धर्म केवल धार्मिक लोगों की ठग-विद्या है अथवा उनकी आय का साधन मात्र है ?

उत्तर—हे प्रिय आत्मन् ! इस ब्रह्माण्ड में श्री विश्व-पिता ॐ आनन्दमय प्रभु का एक ही स्वरूप है और वे ही सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, सर्वव्यापी, आकाशवत् निराकार रूप से सर्वत्र विराजमान हैं। इस सिद्धान्त से उनका कोई नाम नहीं है। धार्मिक ग्रन्थों में जो हजारों नामों की व्याख्या है, वह श्री भगवत् प्रेमी भक्तों ने अपने-अपने प्रेम से की है।

ॐ आनन्दमय प्रभु पिता की मर्यादा (विधान) अनादि काल से एक ही है, परन्तु उस भगवत् मर्यादा का रूपान्तर कर अनेकों ग्रन्थ लिखना और भिन्न-भिन्न मार्ग बतलाना इत्यादि बनावटी धर्मात्माओं का कार्य है।

वर्तमान में भारत देश में कई प्रकार के पदार्थ असली के नाम से नकली तैयार किए जा रहे हैं और कई पदार्थ असली-नकली मिश्रित तैयार हो रहे हैं। उसी प्रकार भारत देश के अधिकांश धार्मिक ग्रन्थ तो ऋषि-मुनियों के नाम से सर्वथा मिथ्या रचे हुए हैं और कुछ ग्रन्थ रूपान्तर से असली और नकली को मिश्रित करके रचे हुए हैं।

जैसे पशु का घी असली है और जमाए हुए तेल का

घी नक़ली है तथा दोनों को मिश्रित कर असली घी के नाम से देना कपट है, इसी प्रकार धार्मिक ग्रन्थों को भी असली, नकली, और मिश्रित समझा गया है।

श्री गीता शास्त्र के विधानानुसार संग, सेवा, संयम और जप-ध्यान परायण होकर समस्त गुणों को धारण करने वाले प्रेमी भक्तों के सम्पूर्ण मानसिक रोग शान्त होते हैं और उसका जीवन भगवत् आनन्द-शक्ति युक्त शान्तिमय बन जाता है। यह अनादि सिद्धान्त सर्वथा सत्य है।

स्मृति रहे ! भगवत् आनन्द-शान्ति सम्पन्न, ध्यान-समाधिमग्न, गुणवान श्री देव-देवाङ्गनाओं द्वारा ही भगवत् मर्यादा विषयक शिक्षा प्राप्त करने का विधान है।

श्री ध्यानमग्न मानव जिस नाम मंत्र का जप, जिस गुण सम्पन्न स्वरूप की स्मृति, जिस ग्रन्थ का दैनिक पाठ तथा यथा ज्ञान शक्ति जो सेवा कार्य करने का आदेश दें, उसी से ही भगवत् पद प्राप्त होने का विधान है। अन्यथा जैसे उत्तम औषधियों से सम्पन्न चिकित्सालय के विद्यमान रहते हुए भी ज्ञानवान् चिकित्सक देव के विना हम स्वयं अपने शरीर को निरोगी नहीं बना सकते और न ही अज्ञानी चिकित्सकों के द्वारा निरोगता प्राप्त की जा सकती है, ऐसे ही मानसिक चिकित्सा के सम्बन्ध में समझना चाहिए।

दुःख-अशान्ति वर्द्धक काम, क्रोध, ईर्षा, नाराज़गी आदि मानसिक रोगों की शान्ति और भगवत् आनन्द-शक्ति युक्त परम पद की प्राप्ति न होने में कई कारण हैं जैसे—

(१) जिस व्यक्ति से मंत्र लिया हो वह सेवायोग और ध्यानयोग जनित आनन्द-शान्ति का अनुभवी न हो अर्थात् गुण रहित स्वांगी वाचाल हो ।

(२) जप जपने वालों ने स्वयं ही जाली ग्रन्थों से पढ़कर मंत्र जपना प्रारम्भ किया हो ।

(३) मंत्र जप करने वालों ने राज विधान के विरुद्ध—झूठ, कपट, चोरी, रिश्वत् आदि ठगनीतियों द्वारा धन उपार्जन करने के स्वभाव का त्याग न किया हो ।

(४) श्री भगवत् पदाधिकारी ध्यानमग्न मानव के आदेशानुसार संग-सेवा का ग्रहण न किया हो ।

(५) कथा वाचक, उपदेशक अथवा मंत्र-दाता गुरुदेव स्वयं ही कामनाओं से तपायमान होकर श्री प्रभु की जेल रूप चिन्ता-क्रोध युक्त नाराज़ मुद्रा का दर्शन देते हों ।

(६) मंत्र जप करने वालों ने निम्नाङ्कित चिन्ता-क्रोध वर्द्धक पाप कर्मों का त्याग न किया हो—

(क) कामी-क्रोधी असुर मनुष्यों से अहंता, ममता और कामना युक्त प्रेम करना पाप है ।

(ख) अहंता-ममता बुद्धि से सम्पत्ति संग्रह करना राजसी पाप है।

(ग) राग-द्वेष पूर्वक अनावश्यक इन्द्रिय-भोग भोगना पाप है।

(घ) तन, जन और सम्पत्ति को अकर्मण्य रखना महापाप है अर्थात् तामसी पाप है।

(ङ) अपनी सन्तानादि को सात्त्विक संग सेवा और जप-ध्यान आदि में प्रवृत न रखना पाप है।

(च) धृतराष्ट्र-गान्धारी के सदृश कामी-क्रोधी मनुष्यों का पालन-पोषण करते रहना पाप है।

(छ) देह शक्ति रहते हुए मुफ्त-खोर रहना तामसी पाप है।

(ज) अनुभव रहित उपदेश देना ब्रह्महत्या पाप है।

(झ) श्री ध्यानमग्न इन्द्रिय संयमी गुणवानों पर दोष-बुद्धि करना महाघोर ब्रह्महत्या पाप है इत्यादि (*)।

(*) पाप-पुण्य विषयक पूर्ण ज्ञान श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ (भाग १) में प्रकाशित है।

स्मृति रहे ! जो महात्मा अथवा पुजारी कामाग्नि और क्रोधाग्नि से तपायमान रहते हैं उनके बतलाए हुए भगवान् के दर्शन से और नाम मंत्र से तथा लोक प्रसिद्ध ग्रन्थ से आनन्द-शान्ति और मोक्ष की प्राप्ति होने का विधान नहीं

है। परन्तु जैसे बनावटी वैद्यों की औषध और जाली नोट भोली जनता में चलते हैं, ऐसे ही बनावटी भेष-भाषा के महात्मा-पण्डितों के मंत्र तथा अनेकों धार्मिक अनुष्ठान अन्धश्रद्धालु समुदाय में चल रहे हैं।

जैसे राज-कार्यकर्ता राज विधान के विरुद्ध तामसी कर्म करने वाले मनुष्यों को कारागृह में रखते हैं वैसे ही भगवत् विधान के विरुद्ध राजसी अथवा तामसी भाव-आचरण करने वाले मनुष्यों को श्री न्यायकारी प्रभु जी चिन्ता-क्रोध रूपी जेल में रखते हैं। यह मानसिक जेल है।

अपराधी मनुष्यों के हृदय को श्री प्रभु जी नाराज़गी रूपी तीरों द्वारा विदीर्ण करते रहते हैं। नाराज़गी दुःख-अशान्ति की जननी है, प्रसन्नता सुख-शान्ति की माता है।

भगवान् के सच्चे भक्त (*) सदा-सर्वदा प्रसन्न रहते हैं "प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति" श्री गीता अ० १८/५४।

(*) सच्चा भक्त अथवा पण्डित महात्मा वही है जो श्री गीता अ० १८/श्लोक ५० से ५५ तक के विधान को पूर्ण रूप से धारण करता है।

स्मृति रहे ! वर्तमान में धार्मिक संस्था संचालकों के भाव-आचरण कलुषित हो जाने के कारण वे स्वयं ध्यानयोग

जनित आनन्द-शक्ति से वंचित हो रहे हैं और उनका दिया हुआ मंत्र शक्ति हीन हुआ है।

उसी प्रकार जब ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय मंत्र के प्रचारक ध्यानयोग जनित आनन्द-शान्ति से रहित कामी, क्रोधी, लोभी हो जाएँगे तब उनके द्वारा दिया हुआ यह दिव्य मंत्र भी शक्तिहीन हो जाएगा।

विशेष स्मृति रहे ! जो मानव इन्द्रियों के संयमयुक्त सत्य-व्यवहार पूर्वक निष्काम भाव से सेवा करता हुआ ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय भगवान् को हर समय याद करता है उस धैर्यवान् सहनशील भक्त के लिए ॐ आनन्दमय भगवान् का परमपद दायक द्वार सदा खुला रहता है।

प्रश्न—सत्य-असत्य की परीक्षा कैसे हो ?

(१) स्मृति रहे ! किसी भी भगवन्नाम् मंत्र का नियमानुसार एक महीना जप करने से यदि आन्तरिक शान्ति प्रसन्नता का अनुभव न हो तो निश्चय कर लें कि यह मंत्र ॐ आनन्दमय प्रभु जी को मान्य नहीं है, शक्ति हीन शब्दमात्र है।

जिस लोक प्रसिद्ध मंत्र के जपने से सदाचारी मनुष्यों का भी ध्यान नहीं लगता, उस मंत्र के विषय में यह

समझना चाहिए कि तामसी गुरुओं के कारण श्री प्रभु जी ने उस मंत्र की शक्ति नष्ट कर रक्खी है। तामसी गुरु वे हैं जो स्वयं तो ध्यानयोग से वंचित हैं परन्तु मंत्र के प्रचारक हैं और पापमोचनहारी अथवा मोक्ष के दाता बने हुए हैं।

सेवायोग-ध्यानयोग के त्यागी और प्रसाद धर्म के रागी बनावटी धर्मी लोग भारत देश में दीर्घकाल से विद्यमान हैं जो कि आध्यात्मिक सम्पत्ति के नाम से अथवा मुक्ति के नाम से ठगते आए हैं।

ध्यानयोग रहित कामी-क्रोधी मनुष्यों का भगवत् विषयक ज्ञान और भगवन्नाम मंत्र आनन्द-शक्ति वर्द्धक नहीं, अपितु जाली सिक्का है।

आप योगसिद्ध (*) ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय महामंत्र का जप करें, आपको अवश्य ही आनन्द-शान्ति का अनुभव होता रहेगा।

(*) प्रश्न—योगसिद्ध शब्द किसका वाचक है ?

उत्तर—पथ्य-परहेज़ युक्त जिस औषधि के सेवन करने से रोग की निवृत्ति हो, उस औषधि को 'रोग-सिद्ध' कहा जायगा। ऐसे ही सद्गुण-सदाचार पूर्वक जिस मंत्र के जप से दिव्य आनन्द और शक्ति वर्द्धक धारणा-ध्यान-समाधि (ब्रह्मसाक्षात्कार और आत्मबोध) की सिद्धि हो, उस मंत्र को 'योगसिद्ध' कहा जाता है।

(२) स्मृति रहे ! किसी भी ग्रन्थ को विधि पूर्वक पन्द्रह दिन पठन करने से यदि चिन्ता, क्रोध आदि मानसिक रोग कम होकर प्रेम, प्रसन्नता आदि उत्तम गुणों की वृद्धि न हो, तो निश्चय कर लें कि यह ग्रन्थ आत्मिक उन्नति करने वाला नहीं, इसका माहात्म्य बनावटी नोट के सदृश है। आप अनुभव पूर्ण आदर्श श्री विश्वशान्ति सद्ग्रन्थ को विधि पूर्वक पठन-श्रवण करें, आपके दुर्गुणों का नाश और सद्गुणों का विकास होना प्रारम्भ होगा।

आप भगवान् के दर्शनों की अथवा मोक्ष की इच्छा का त्याग कर सर्व प्रथम श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु की मर्यादा को धारण करने का प्रयत्न करें।

भगवत् आनन्द-शान्ति, भगवत् पद-शक्ति, भगवत्-दर्शन, आत्मज्ञान और मोक्ष इत्यादि दिव्य सम्पत्ति श्री कृपालु ॐ आनन्दमय प्रभु जी सद्गुण सम्पन्न मानव को स्वयं ही प्रदान करते रहते हैं।

(३) स्मृति रहे ! किसी भी श्री महापुरुष देव का एक सप्ताह विधिपूर्वक संग करने पर यदि ध्यानयोग जनित आनन्द-शान्ति और शक्ति का अनुभव न हो तो निश्चय कर लें कि यह सुन्दर भेष-भाषा का ही पण्डित-महात्मा है। आप श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ द्वारा शिक्षित

श्री ध्यानमग्न मानव का समागम करें आपको चार ही दिन के अन्दर ध्यान करने की विधि का ज्ञान होगा और ध्यान करवाने की योग्यता प्राप्त होगी (*)।

(*) जब तक श्री ध्यानयोग के ज्ञाता-दाताओं का समागम न हो, तब तक ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय महामंत्र के जप का तथा श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ में प्रकाशित गुण ज्ञान को धारण करने का अभ्यास करें, आपका ध्यान लगना सम्भव है।

---

(४) स्मृति रहे ! किसी भी लोक प्रसिद्ध उपदेशक अथवा महात्मा के सम्पर्क में रहने वाले प्रेमियों में से यदि किसी का भी ध्यान नहीं लगा, तो समझ लें कि यह गुरु ॐ आनन्दमय प्रभु का प्रेमी भक्त नहीं अपितु काम-क्रोध युक्त जेल निवासी है।

आप गुरु भगवान् से प्रार्थना करें कि भगवन् ! चार-छः घन्टा ध्यान-समाधि का दर्शन देने की कृपा करें। यदि उपदेशक सफाई शब्द उच्चारण करे तो समझ लें कि यह वक्ता ॐ आनन्दमय प्रभु का भक्त नहीं, केवल ग्रन्थों की सुन्दर वाणी रट कर हमारा स्वामी होने का इच्छुक है। इनका ज्ञान श्रवण करने से ध्यानयोग जनित आनन्द-शान्ति की प्राप्ति तो दूर रही, जेल रूप चिन्ता-क्रोध से मुक्त होना भी सम्भव नहीं।

ध्यानयोग का दर्शन देने पर अथवा न देने पर यह निर्णय हो जायगा कि वक्ता धर्मात्मा है अथवा पापात्मा है।

श्री भगवत् भक्त की परीक्षा करने की यह प्रधान कसौटी है अथवा दूरबीन यन्त्र है।

धर्म विषयक ज्ञान दाता देवी स्वरूप हो अथवा पुरुष रूप हो यदि वह दो-चार घन्टा भी योग आसन से विराजित होकर नेत्र बन्द करके भजन-ध्यान का दर्शन देने में असमर्थ हो तो उसका उपदेश व कथा-कहानी सिनेमा के सदृश केवल इन्द्रियों का विषय होगा, आत्मिक आनन्द-शान्ति की प्राप्ति कदापि नहीं होगी।

ऐसे मनुष्यों को दान-दक्षिणा व भिक्षा देना धर्म नहीं अपितु चिन्ता, क्रोध और दु:ख-अशान्ति वर्द्धक पाप है।

अब श्री न्यायकारी आनन्दमय प्रभु जी राज कार्य कर्ता पण्डितों द्वारा ही भारत देश के मुक्ति दाताओं की गिरफ्तारी करा रहे हैं।

(५) स्मृति रहे! यदि कोई अन्धश्रद्धामय धर्मों का अनुष्ठान कराने वाला पण्डा-पुजारी व पण्डित-संन्यासी अथवा मौलवी साहब आदि कहे कि अमुक पूजा-पाठ का

फल मृत्यु के बाद होगा, तो आप भी उनके प्रति यह कह सकते हैं कि आपको भी दान-दक्षिणा और भोजन आदि उसी जन्म में देंगे, अभी आप श्रम करके भोजन पाएँ (*)।

(*) *यदि कोई बाहरी शरीर का चिकित्सक कहे कि औषध का लाभ मृत्यु के बाद होगा, तो क्या आप उसकी सेवा-शुश्रूषा करेंगे ?*

प्रश्नकर्त्ता का समाधान

भगवन् ! आपके दिव्य वचन महापुरुष श्री कृष्ण भगवान् के आदेशानुसार सत्य हैं। अमर वाणी श्री गीता में भी अध्याय ३ श्लोक २१ में मनुष्यमात्र के प्रति यही आदेश है कि श्रेष्ठ महापुरुष जो-जो सद्गुण-सदाचार का आचरण करता है वही आचरण सब कोई करें और उनकी आज्ञानुसार शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आध्यात्मिक व सामाजिक आदि सम्पूर्ण कर्म करें। यही सच्चा विधान है।

हे प्रिय आत्मन् ! ध्यानयोग-सेवायोग के त्यागी, कामी-क्रोधी महात्मा-पण्डितों के बतलाए मंत्र से और उनके सुन्दर व्याख्यान से तथा उनकी सेवा पूजा से श्री न्यायकारी ॐ आनन्दमय प्रभु ध्यानयोग जनित आनन्द-शान्ति प्रदान नहीं करते।

तामसी मनुष्यों की सेवा-रक्षा व पालन-पोषण करने के दण्ड स्वरूप तो मनुष्य का जीवन श्री गीता अ० १८/२८, ३२, ३५, के लक्षणयुक्त तामसी बना देते हैं।

ध्यान-समाधि रहित कामी-क्रोधी मनुष्यों से मंत्र लेना व उनसे ज्ञान श्रवण कर धार्मिक आचरण करना तो उनके पशु बनकर अशान्तिमय जीवन बिताने का साधन है।

पहले जन्म में किए कर्मों का सुख-दुःख और शान्ति-अशान्ति इस जन्म में भोगो तथा इस जन्म में किए कर्मों का फल अगले जन्म में मिलेगा, यह बनावटी धर्मात्माओं का सफाई ज्ञान है।

श्री गीता अध्याय ४/३४ के विधान में मनुष्यमात्र के प्रति आदेश दिया है कि दिव्य आनन्द-शान्तियुक्त भगवत् शक्तिसम्पन्न होने का और मुक्ति प्राप्त करने का समस्त ज्ञान श्री समाधिमग्न सन्तोषी-समतावान, तत्त्वदर्शी, आत्म-ज्ञानी महापुरुषों से ही प्राप्त करें अर्थात् उन्हीं के आदेशानुसार संयम, सेवा, जप-ध्यान तथा आहार-विहार सम्बन्धी समस्त कार्य करें। अन्यथा ध्यानयोग से अनभिज्ञ मनुष्यों के उन्नति विषयक सम्पूर्ण ज्ञान जाली सिक्के हैं।

हे प्रिय आत्मन् ! गुण रहित बनावटी धर्मात्माओं की

प्रतिष्ठा के प्रभाव से भारत देश का सब प्रकार से अधः-पतन हुआ है। देश उत्थान के लिए दो उपाय हैं—

(१) मानव सेवा के त्यागी, ध्यानयोग से अनभिज्ञ, प्रेम, प्रसन्नता, समता, सन्तोष आदि गुणों से रहित बनावटी भेष-भाषा के वाचालों को ऋषिदेव और श्रमदेव बना-कर उनके मिथ्या धर्म की निन्दा करना।

(२) श्री गीता शास्त्र के आदर्श युक्त हिन्दी भाषा में प्रकाशित श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ की, पाठशालाओं में व्यापक प्रतिष्ठा करना।

श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ में प्रकाशित गुण वर्द्धक ज्ञान को धारण करने वाला व्यक्ति और समाज सुख-शान्ति युक्त श्री भगवत् आनन्द-शक्ति को प्राप्त होगा और कामी-क्रोधी मनुष्यों के आचरणों को धारण करने वाला व्यक्ति चिन्ता नाराज़गी युक्त दुःखी-अशान्त रहेगा यही मंत्र विद्या का रहस्य है।

श्री योगसिद्ध वेदान्तिक ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय महामंत्र जपें, श्री विश्वशान्ति आश्रम द्वारा प्रकाशित श्री ग्रन्थों को "नियमानुसार" बारम्बार पढ़ें। तदनुसार संयम सेवा व स्मरण-ध्यान करते हुए उक्त गुणों को धारण करें, पुनः आपका भाग्य उदय होता रहेगा। ॐ शान्तिमय

श्री सेवायोग का ज्ञान

निष्कामभावों की जागृति के उद्देश्य से की हुई सेवा का ही फल है आत्मिक आनन्द मेवा।

श्री भगवत् आनन्द-शान्ति और शक्तियुक्त परमपद की प्राप्ति अर्थ श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु के अनुकूल सेवा करने की क्रमशः २७ प्रक्रियाएँ निम्नाङ्कित हैं।

(१) श्री प्रेममय भगवत् दृष्टि द्वारा सेवा करना—जो कुछ भी देखा-सुना जाय सब कुछ ॐ आनन्दमय प्रभु का ही साकार स्वरूप है। इस सिद्धान्त का मनन करते हुए प्रेम-प्रसन्नता की भावना में मग्न रहना। यह समग्र-विराट-स्वरूप श्री साकार भगवान् की व्यापक सेवा है।

इस सेवा के फल-स्वरूप मानसिक रोगों की वृद्धि नहीं होती। अन्यथा दोष दर्शन और भोग दर्शन आदि के प्रमादी संकल्पों से मानसिक रोगों की वृद्धि होती है।

(२) आदर सत्कार द्वारा सेवा करना—समागम के समय ॐ आनन्दमय भगवान् की भावना करते हुए अपने

से गुणवानों के साथ नतमस्तक होकर करबद्ध ॐ आनन्दमय मंत्र उच्चारण करना। समान गुण वालों से हाथ जोड़ कर ॐ आनन्दमय मंत्र उच्चारण कर प्रेम-प्रसन्नता प्रकट करना। यह सेवा सामाजिक उन्नति में सहायक है।

(३) आसन द्वारा सेवा करना—स्थान पर पधारे हुए प्रेमीजनों में ॐ आनन्दमय प्रभु पिता की भावना करते हुए यथापात्र के अनुसार आसन प्रदान करना। इस सेवा से सामाजिक उन्नति होती है।

(४) प्रिय वचन द्वारा सेवा करना—सब रूपों में ॐ आनन्दमय भगवान् की भावना करते हुए जिस किसी के साथ वार्तालाप करने का अवसर प्राप्त हो उसके साथ सत्य, प्रिय और हितकारक वचन उच्चारण करना।

स्मृति रहे! भूत, भविष्य और वर्तमान की व्यर्थ वार्तालाप न करके श्री भगवत्-विषयक सात्त्विक वार्तालाप करना। अन्यथा मौन मुद्रा से ॐ आनन्दमय भगवान् का स्मरण करते रहना उत्तम है। यह सेवा गुण और ज्ञान की वृद्धि में सहायक है।

(५) जल द्वारा सेवा करना—स्थान पर पधारे हुए श्री भगवत् स्वरूपों को जल पिलाना तथा गर्मी में हवा करना और अपनी शक्ति अनुसार प्याउ, कुआँ, तालाब,

पुष्करिणि, नहर, नल, टयूबवेल, टँकी आदि द्वारा नगर व देश की सेवा करना।

(६) भोजन द्वारा सेवा करना—मन ही मन ॐ आनन्दमय भगवान् का स्वरूप समझते हुए अपनी परिस्थिति अनुसार उदारता पूर्वक श्रद्धा-प्रेमयुक्त श्री ध्यान-मग्न सद्गुण-सदाचारी मानवों को भोजन अथवा जलपान कराना।

(७) अन्न द्वारा सेवा करना।

(८) वस्त्र द्वारा सेवा करना।

(९) धन द्वारा सेवा करना।

(१०) भवन द्वारा सेवा करना।

(११) जागीर द्वारा सेवा करना।

(१२) औषध द्वारा सेवा करना।

(१३) जन (सेवक) द्वारा सेवा करना।

स्मृति रहे! संख्या ५ से १३ तक प्रकाशित सेवाएँ सुयोग्य पात्र की अपनी शक्ति अनुसार भगवत्-बुद्धियुक्त, निष्काम-भाव से करें और अन्य मित्र-बन्धुओं से भी करवाने की चेष्टा करें। सुयोग्य पात्र की पहचान इसी लेख में पृष्ठ ६५ से ६८ पर प्रकाशित है (*)।

(*) श्री सेवायोग और ध्यानयोग के अभ्यासी गुणवान् मानव तन व धन द्वारा सेवा करने के पात्र हैं और अस्वस्थ अवस्था में विशेष सेवा करने के पात्र हैं।

श्री महापुरुष देव के आदेशानुसार उपरोक्त सेवा कार्य करते रहना आर्थिक निश्चिन्तता का साधन है।

(१४) आश्वासन द्वारा सेवा करना—किसी भी प्रकार से घबराए हुए भयातुर दुःखी मनुष्यों पर श्री भगवत् लीला की भावना करते हुए अपने हृदय को प्रेम, प्रसन्नता एवं समता में रखते हुए उन्हें शान्त करने की सेवा करना। इस सेवा से अपने में धैर्य गुण धारण होता है जो जीवन नौका का पतवार है।

(१५) व्यवहारिक ज्ञान द्वारा सेवा करना—अपने अनुभव में जो प्रत्यक्ष लाभदायक ज्ञान हो, उसे स्वामीपन व स्वार्थ के भावों से सावधान रहते हुए, निष्कामभावपूर्वक, भगवत्-बुद्धि रखते हुए, यथापात्र की सेवा-पूजा के रूप में प्रदान करते रहना। इस सेवा के प्रभाव से गुण और ज्ञान का विकास होता है।

(१६) मान द्वारा सेवा करना—श्री भगवत् प्रेमी देश सेवक सज्जन देवी-पुरुषों का सन्मान करना उत्तम सेवा है। इस सेवा से देश व विश्व की उन्नति होती है।

(१७) **कीर्ति-बड़ाई द्वारा सेवा करना**—श्री ध्यानयोग के ज्ञाता-दाता गुणवान् देव-देवाङ्गनाओं के सुख-शान्ति व आनन्द-शक्तिदायक सद्गुण-सदाचारों की यथा पात्र के सन्मुख वाणी लेखनी द्वारा व्याख्या करते-करवाते रहना अति उत्तम सेवा है। इस सेवा के प्रभाव से अश्रद्धालु मनुष्य भी ॐ आनन्दमय प्रभु की मर्यादा पालन करने में उत्साही होकर ध्यानयोग जनित आनन्द-शक्ति को प्राप्त करने के पात्र बनते हैं (*)।

(*) संयम, सेवा और ध्यानयोग के त्यागी बनावटी भेष-भाषा वाले कामी-क्रोधी ठगधर्मियों को तो देश के महाशत्रु समझकर उनकी चिकित्सा बुद्धि से यथाशक्ति निन्दा, अपमान, तिरस्कार करना। जैसे तामसी कर्म करने वाले जेल-फांसी के अधिकारी हैं, वैसे ही मिथ्या धर्म का प्रचार करने वाले दम्भी-पाखण्डी मनुष्य भी राज्य द्वारा दण्डनीय हैं।

---

(१८) **प्रतिष्ठा द्वारा सेवा करना**—श्री सर्वगुण सम्पन्न समाधिमग्न महापुरुषदेव के आनन्द-शान्तियुक्त शक्ति-दायक गुण प्रभाव को समझ कर उनकी अपने घर-परिवार में और विश्व में प्रतिष्ठा करना। जनता में ऐसे श्रद्धामय-प्रेममय भावों को जाग्रत करते रहना, जिससे सब कोई

श्री महापुरुष देव के अनुगत् गुण और ज्ञान को धारण कर (*) पूर्ण सुख, शान्तियुक्त आनन्द-शक्ति को प्राप्त करें। इस सर्वोत्तम सेवा से श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु के परमपद की प्राप्ति होती है (†)।

(*) श्री महापुरुषदेव के अनुगत गुण-ज्ञान को धारण करने की विधि और विधान श्री विश्वशान्ति (भाग १) के "श्री ग्रन्थ नियमावली" नामक लेख में प्रकाशित है।

(†) श्री समाधिमग्न सुहृदता, समता सम्पन्न महापुरुषदेव द्वारा विश्व में अपरिमित लाभ होता है और सेवायोग व ध्यानयोग के त्यागी गुण रहित, स्वाङ्गी वाचाल, पण्डित-महात्मा द्वारा विश्व में महती हानि होती है। बनावटी धर्मियों की सेवा, शुश्रूषा और प्रतिष्ठा करने के दण्ड-स्वरूप भारत देश दूर देशों की अपेक्षा अत्याधिक तामसी आचरण युक्त चिन्तित, क्रोधित और भयातुर हुआ है अर्थात् तामसी धर्मों के पालन से श्रेष्ठ ज्ञान रहित और शक्तिहीन होकर दुःखमय-अशान्तिमय हुआ है।

---

(१६) तन द्वारा सेवा करना—अपने शरीर को जीवन भर के लिए श्री महापुरुषदेव की सेवा में अर्पण कर देना अर्थात् निष्काम भाव पूर्वक कठपुतली की भाँति सर्वथा अनुगत हो जाना। श्री महापुरुषदेव की आज्ञापालन में अपनी बुद्धि की प्रधानता न देना। ऐसी सेवा करने वाला मानव ॐ आनन्दमय प्रभु पिता का पूर्ण श्रद्धालु प्रेमी है (*)।

(*) स्मृति रहे ! धन की इच्छा से, इन्द्रिय भोगों की अभिलाषा से अथवा अपने तन की सेवा करवाने के भाव से और यश-मान-प्रतिष्ठा की प्राप्ति के भाव से जो भी सेवा कार्य किया जाता है, वह हृदय के स्वार्थ भाव से युक्त होने के कारण श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु के पद से वंचित रखता है। जैसे कि विश्व के राज-कार्यकर्ताओं को वंचित कर रक्खा है। अतः स्वार्थ भाव ही आध्यात्मिक सम्पत्ति का शत्रु है।

वर्तमान के राज-कार्यकर्ताओं से पूछा जाए कि आपने आजीवन देश की सेवा की परन्तु क्या आपको कोई भगवत् आनन्द-शान्ति और शक्ति का भी अनुभव हुआ, तो उत्तर मिलेगा, नहीं।

ध्यानयोग जनित आनन्द-शक्ति के अनुभवी भगवत् पदाधिकारियों को श्री महापुरुषों का आदेश है कि कामी मन को और अहंकारी मन-बुद्धि को दमन करने का सतत प्रयत्न करते रहना चाहिए। कामी मन ध्यानयोग का शत्रु है।

(२०) **आध्यात्मिक ज्ञान द्वारा सेवा करना**—भीतरी शरीर के आहार-विहार के ज्ञान को, अन्तः शरीर के रोगों के ज्ञान को और मानसिक चिकित्सा के ज्ञान को ॐ आनन्दमय भगवान् की पूजा सामग्री समझ कर निरअभिमानता पूर्वक आठ वर्ष के बालक-बालिकाओं से लेकर मानव मात्र की सेवा में यथा शक्ति अर्पण करते रहना, ॐ आनन्दमय प्रभुपिता का आदेश है (†) श्री गी० अ० १०।६; १८।६८,६६।

(†) श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ (भाग १-२) इस ज्ञान से पूर्ण है, अतः इन ग्रन्थों को यथाशक्ति प्राप्त कर जनता भगवान् की सेवा में वितरण करते रहना अथवा जनता से मूल्य सेवा प्राप्त कर प्रचार करते रहना श्रेष्ठ सेवा है। माता-पिताओं का परम कर्तव्य है कि सन्तानों को जन्म से ही श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ में प्रकाशित भगवत् विधान की शिक्षा देते-दिलाते रहें।

---

(२१) **ध्यानयोग द्वारा सेवा करना**—ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के आश्चर्यजनक पुरस्काररूप ध्यानयोग की मग्नता का दर्शन देना, मौन सेवा है। ध्यानयोग में श्रद्धा-प्रेम बढ़ाकर यथाशक्ति मनुष्यमात्र को ध्यानमग्न करने का प्रयत्न करते रहना महती सेवा है। ध्यान करने और ध्यान कराने वाला मानव विश्व का सच्चा सेवक बनता है।

ॐ आनन्दमय प्रभु के अनुकूल सात्त्विक मनन-विचार युक्त सेवा और नाम-रूप के स्मरण का फल ध्यान-समाधि है (*)।

(*) सत्संग और स्वाध्याय के प्रभाव से जप-ध्यान करने की प्रवृत्ति होती है। जप-ध्यान के प्रभाव से निष्काम भाव पूर्वक सेवा करने में श्रद्धा होती है। निष्काम भाव पूर्वक की हुई सेवा के प्रभाव से जप-ध्यान की गाढ़ स्थिति होती है। स्थायी निष्कामता की सिद्धि के प्रभाव से ॐ आनन्दमय प्रभु पिता का साक्षात्कार होता है जो आत्मबोध का दाता है।

स्मृति रहे ! ध्यानयोग अभ्यासी श्री भगवत् पदाधिकारी मानव का जितने घन्टे ध्यान लगता है, उनके आदेशानुसार संग, सेवा व पठन-श्रवण और जप-ध्यान करते रहने से, आपका भी उतना ही ध्यान लगना सम्भव है (*)।

(*) ध्यानयोग रहित गुरुओं के वचनों से मनः शान्ति रूप ध्यान लगना सम्भव नहीं। यदि आपका ध्यान नहीं लगा तो समझ लें कि मेरे द्वारा किए हुए यज्ञ, दान, तप, तीर्थ, व्रत आदि समस्त कर्म-धर्मों का फल बनावटी सिक्के हैं, इन जाली धर्मों का मूल्य मृत्यु के पश्चात् भी प्राप्त नहीं होगा।

---

(२२) समाधि (स्व-स्वरूप-बोध) द्वारा सेवा करना— आनन्दमय आत्मस्वरूप में नित्य-स्थित रहते हुए यथापात्र के प्रति भगवत् विधानयुक्त आत्म-प्रभाव का उपदेश देने की सेवा करते रहना श्री महापुरुषों का सहज स्वभाव होता है।

(२३) विशुद्ध आचरणों (दिव्यकर्मों) द्वारा सेवा करना— श्री महापुरुषों के स्थूल-सूक्ष्म दोनों शरीरों से होने वाले भाव आचरण सम्पूर्ण मनुष्यों के लिए परम आदर्श होते हैं अर्थात् प्राणीमात्र के लिए हितकारी होते हैं। श्री समाधिमग्न महापुरुषों का गुण वर्द्धक ज्ञान श्रद्धालु प्रेमीजनों

को आजीवन सुख, शान्तियुक्त आनन्द-शक्ति देने वाला और जन्म-मृत्यु से छुड़ाने वाला होता है ।

(२४) मन द्वारा सेवा करना—श्री महापुरुषों के विशुद्ध मन से आत्म-स्वरूप का मनन तथा प्राणीमात्र का हित चिन्तन होता है, जिसके प्रभाव से श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु द्वारा विश्व को अनेकों प्रकार के महत्त्व-पूर्ण लाभ प्राप्त होते हैं जिनका वर्णन होना सम्भव नहीं।

(२५) बुद्धि द्वारा सेवा करना—श्री समाधिमग्न महापुरुषों के विशुद्ध हृदय में सदा-सर्वदा सम्पूर्ण विश्व में सुख-शान्ति के प्रसार का मनन-विचार होता है और तदनुसार विश्व में समाज द्वारा क्रमशः तामसी मर्यादाओं का दमन होकर सात्त्विक मर्यादा स्थापन करने की आयोजना बनती रहती है । इस गोपनीय सेवा का प्रभाव अनिर्वचनीय है ।

जैसे सूर्य के सन्मुख अनेकों बत्तियों का प्रकाश तुच्छ भासता है, ऐसे ही श्री समाधिमग्न महापुरुषों के हृदय कमल से की हुई सेवा के सन्मुख अनेकों मनुष्यों द्वारा की हुई तन, धन और ज्ञान की सेवा तुच्छ है ।

(२६) परमाणु द्वारा सेवा करना—जिस स्थान पर श्री महापुरुषदेव विराजमान रहते हैं वहाँ के निवासियों

को स्वाभाविक ही लाभ होता रहता है। जैसे पुष्प से सुगन्धि अथवा जैसे चन्दन के पेड़ के सम्पर्क में रहने वाले सुगन्धि ग्राही पेड़ भी चन्दन की सुगन्धियुक्त हो जाते हैं, वैसे ही गुण ग्राही मानव सद्गुण-सदाचारी होते रहते हैं।

श्री महापुरुषों के सद्गुण-सदाचारों की और प्रभाव की जो चिरकाल तक महिमा गाई जाती है यह सेवा भी परमाणु सेवा के अन्तर्गत है।

(२७) सत्यशास्त्र द्वारा सेवा करना—पूर्ण आनन्द, शान्ति और शक्तियुक्त सर्व गुण सम्पन्न आत्मज्ञानी श्री महापुरुषों द्वारा रचा हुआ आदर्श शास्त्र ही प्रत्यक्ष आनन्द शान्ति युक्त शक्ति वर्द्धक होता है (*)।

(*) विचारशील भगवन्! विश्व में अत्याधिक संख्या में धार्मिक ग्रन्थ विद्यमान हैं परन्तु आनन्द-शक्ति दायक आठ सिद्धियों से युक्त ॐ आनन्दमय प्रभु के पद को प्राप्त करने के कारणों का ज्ञान तथा चिन्ता-क्रोध दायक आठ असिद्धियों से युक्त श्री प्रभु की जेल से निवृत होने का पूर्णज्ञान स्पष्ट रूप से कहीं पढ़ने सुनने को नहीं मिलता। इस ज्ञान को स्पष्ट समझने के लिए श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ (भाग १—२) आप के कर कमलों में है।

प्राचीन काल के शुद्ध शास्त्र प्राप्त होने पर भी वक्ता के गुणों के अनुसार ही श्रोताओं को लाभ होने का विधान है।

अनुभव करें! श्री उपदेश दाता यदि ध्यानमग्न सन्तोषी समतावान है तो आनन्द-शान्ति की प्राप्ति होगी और यदि कथा वाचक कामी-क्रोधी है तो दुःख-अशान्ति वर्द्धक चिन्ता-क्रोध की प्राप्ति होगी।

उदाहरणार्थ श्री गीता ग्रन्थ राजसी मनुष्यों के संग के प्रभाव से अशान्ति सम्पन्न बनने का ज्ञान देने वाला है और सात्त्विक महात्माओं के संग के प्रभाव से आनन्द सम्पन्न बनने का ज्ञान देने वाला है, उस गीता शास्त्र के लाखों ही वक्ता और करोड़ों ही श्रोता भारत देश में विद्यमान हैं। किन्तु ध्यानयोग जनित आनन्द-शान्ति रहित धर्म-ध्वजियों द्वारा भगवान् की वाणी श्रवण करने वाले श्रोताओं को वैसा ही लाभ हो रहा है जैसे कि चोर-डाकुओं द्वारा धन के कोष की वृद्धि व रक्षा करवाने से होता है।

इस उदाहरण से यही सिद्ध हुआ कि दुःख-अशान्ति की निवृत्ति के लिए हर्ष-शोकादि द्वन्द्वों से लिपायमान कामी-क्रोधी मनुष्यों के भाव-आचरणों को धारण न करना और आनन्द-शक्ति की प्राप्ति हेतु श्री ध्यान-समाधिमग्न महापुरुषों के गुण वर्द्धक ज्ञान को धारण करना ही भगवत् विधान है।

स्मृति रहे! उपरोक्त २७ सूत्रों में जो सेवायोग के विधान का वर्णन किया है, उस विधान के विपरीत

स्वार्थं भाव से अथवा स्वामी भाव से किए हुए कर्म ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के प्रतिकूल समझे जाते हैं।

कामना जनित स्वार्थ सिद्धि की अभिलाषा से जो चिन्ता-क्रोधयुक्त श्री प्रभु के जेल निवासी राजसी-तामसी मनुष्यों की सेवा की जाती है उसके दण्ड स्वरूप सेवा कर्ता का जीवन भी क्रमशः चिन्ता, क्रोध और नाराज़गीयुक्त दुःखमय-अशान्तिमय होने का विधान है। अस्तु

सेवा कर्ताओं की शक्ति का ज्ञान

(१) सेवा संख्या १ से १८ तक श्रद्धा-मिश्रित राजसी मनुष्यों द्वारा करवाई जाती है।

(२) सेवा संख्या १ से २१ तक श्रद्धा, प्रेम और उत्साह-पूर्वक श्री ध्यानमग्न सात्त्विक देव-देवाङ्गनाएँ करते हैं।

(३) सेवा संख्या २० से २७ तक विशुद्ध प्रेम-भावयुक्त श्री आत्मज्ञानी महापुरुषों द्वारा होती है।

सुयोग्य पात्र की सेवा प्रत्यक्ष लाभदायक है

(१) अपने ज्ञान और शक्ति अनुसार सेवा संख्या १ से २१ तक श्री समाधिमग्न महापुरुषों के आदेशानुसार करते रहने से क्रमशः सुख, शान्ति, गुण, ज्ञान और ध्यान, आनन्दयुक्त श्री भगवत् पद की वृद्धि होती रहती है।

सावधान ! वे श्री महापुरुषदेव गीता अध्याय २/५५ से ५६; अ० १४/२२ से २५ और अ० १८/४२ के गुण युक्त हों अथवा श्री विश्वशान्ति भाग (१) में प्रकाशित श्री ब्रह्मज्ञान नामक लेख के अनुसार गुण, ज्ञान एवं प्रभावयुक्त हों। विशुद्ध प्रेमी श्री महापुरुषदेव किसी भी भेष, भाषा, देश अथवा जाति के हों, श्री आपके शरण होकर संयम, सेवा, स्मरण और जप-ध्यान आदि समस्त कर्म करने वाले सद्‌गुण उपासक भक्तों को आनन्द-शक्ति-दायक आठ सिद्धियों की प्राप्ति होगी।

(२) सत्त्वगुण में स्थित ध्यानमग्न श्री देव-देवाङ्ग-नाओं के आदेशानुसार भी सेवा-स्मरण और जप-ध्यान करते रहने से सुख, शान्तिदायक ध्यानयोग जनित आनन्द की वृद्धि होती रहेगी।

सावधान ! सच्चे श्री भगवत् प्रेमी देव-देवाङ्गनाओं के गुण, ज्ञान, भाव, आचरण, श्री गीता अध्याय १२ श्लोक १३ से १६ तक के आदर्श युक्त होते हैं।

वर्तमान की जन-संख्या में ध्यानयोग-सेवायोग अभ्यासी ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के सच्चे प्रेमी कोई बिरले ही हैं। पण्डित रावण कुल के सदृश वेदाचारी कहलाने वाले कामी, क्रोधी, लोभी, तामसी मौलवी, पादरी, पण्डे, पुजारी और संन्यासी तो हैं भारतनाशी !

(३) स्मृति रहे ! विपत्तिकाल में आवश्यकतानुसार सेवा संख्या १ से १४ तक के पात्र, पदार्थों के निर्माणकर्ता राजसी मनुष्य भी हैं।

राजसी मनुष्य स्वावलम्बी, उद्योगी, पुरुषार्थी एवं न्यायव्यवहारी होते हैं। विपत्तिकाल में भी सेवा ग्रहण करने में उनका हृदय दुःखी एवं लज्जित होता है।

(४) सेवा संख्या १—प्रेममय भगवत् दृष्टि द्वारा सेवा करने के पात्र तामसी मनुष्य हैं। परन्तु आग्रह पूर्वक अथवा बल पूर्वक सेवा, दान, भिक्षा लेते रहना तामसी मनुष्यों का स्वभाव होता है।

तामसी मनुष्यों के भाव-आचरण झूठ, कपट, चोरी, डकैती, वैर, हिंसा, अति निद्रा, आलस्य, प्रमाद एवं दम्भ-पाखण्ड-युक्त धोखे परायण होते हैं। क्रोध करना और पल-पल में नाराज़ होना उनका प्रधान लक्षण है। दुर्जन मनुष्यों को राज द्वारा दण्ड दिलाना अथवा उनसे वैराग्य करना ही ॐ आनन्दमय प्रभु पिता का आदेश है (*)।

(*) तामसी भाव आचरण युक्त बालक, वृद्ध, युवा, नर-नारी,
नहीं हैं पालन-पोषण के अधिकारी।

निर्दयी, मोटे-ताजे अकर्मण्य, क्रूर-क्रोधी (तामसी) मनुष्यों का पालन-पोषण करना चिन्ता, क्रोध, भय, रुदन और नाराज़गी दायक पाप है और मानव सेवा के त्यागी ध्यान-समाधि से अनभिज्ञ दम्भी-पाखण्डियों (बनावटी-धर्मियों) को दान-भिक्षा देना अथवा यश-मान देना सर्व-नाशक महापाप है।

ज्ञान करें ! जेलों में निवास करने वाले और दान-भिक्षा की आजीविका वाले तामसी मनुष्य जितनी संख्या में भारत देश में हैं क्या इतनी संख्या में किसी अन्य देश में हैं ? प्रत्येक मानव को विचार करना है कि श्री न्याय-कारी प्रभु धार्मिक देश को 'दरिद्रधाम' और 'कलहधाम' बनाते हैं अथवा 'आनन्दधाम'-'शान्तिधाम' बनाते हैं ?

जटिल तामसी और दम्भी-पाखण्डी मनुष्य तो जेल (कारागृह) के भी पात्र नहीं, अपितु ऐसे राक्षस लोग तो मृत्यु दण्ड के ही पात्र हैं। दुर्जन मनुष्यों का विनाश करना हिंसा नहीं अपितु हिंसा वृद्धि के अन्त करने का साधन है (*)।

(*) राज कार्यकर्ता श्री राम, कृष्ण आदि महापुरुषों ने तामसी मनुष्यों का क्या किया ? (विधान धारा श्री गीता अ० १८/ श्लो० १७ में प्रकाशित है)।

प्रश्न—क्या तामसी मनुष्यों का स्वभाव व ज्ञान नहीं बदल सकता ?

उत्तर—अनुभव रहित उपदेशक तथा धन और पद के अहंकारी मनुष्य तो अपने स्वभाव व ज्ञान को बदलते नहीं, किन्तु अज्ञानवश विपरीत आचरण करने वालों का स्वभाव भगवत् पदाधिकारी श्री सिद्ध-साधकों के अधिक संग से और उनके आदेशानुसार संयम, सेवा, जप-ध्यान आदि सात्त्विक कर्मों का दीर्घकाल तक अभ्यास करने से बदल सकता है।

प्रश्न—भगवन् ! श्री भगवत्-पद प्राप्त सिद्ध अथवा साधकों के साथ अनुचित व्यवहार करने से क्या हानि होने का विधान है ?

उत्तर—हे प्रिय आत्मन् ! जैसे उत्तम व्यवहार का फल ध्यान-समाधियुक्त अखण्ड आनन्द, शान्ति और मोक्ष की प्राप्ति होने का विधान है। ऐसे ही अनुचित व्यवहार करने का दण्ड जीवित अवस्था में ॐ आनन्दमय प्रभु के कारागृह रूप अत्यन्त दुःख-अशान्ति वर्द्धक चिन्ता, क्रोध, भय, रुदन और ईर्षा नाराज़गी आदि मानसिक रोगों में उबलते रहने का विधान है और मृत्यु के बाद नीच योनियों की प्राप्ति होने का विधान है।

विस्तार ज्ञान 'ब्रह्म-हत्या का ज्ञान' और 'श्री संत-चेतावनी' नामक लेखों में प्रकाशित है।

प्रश्न—भगवन्! श्री गीता विधान अनुसार तामसी परिवार की रक्षा न करके, उनका वध कर देना धर्म तथा वध न करना पाप बतलाया; इस विषय में हमें क्या करना चाहिए ?

उत्तर—हे प्रिय आत्मन्! श्री ध्यानमग्न सात्त्विक मानव की शिक्षा दिलाकर उन्हें सज्जन बनाते रहना चाहिए, यह उत्तम धर्म है। अथवा उनका वध न करके राजसी-तामसी परिवार से वैराग्य करना उत्तम है।

हे प्रिय आत्मन्! भाव से 'सर्वभूतहितेरताः' होना गुण है, परन्तु आचरण से बनचर, जलचर और नभचर प्राणियों की सेवा (*) का तथा आसुरी (राजसी-तामसी) प्रकृति के मनुष्यों की अहंता-ममता बुद्धि से स्वेच्छा पूर्वक सेवा करने का त्याग कर दें अन्यथा दिमाग़ पागल के सदृश तपायमान रहेगा और जीवन शोक-द्वेष युक्त पश्चातापमय हो जाएगा।

(*) उपयोगी पशुओं के अतिरिक्त सूअर, बन्दर, कुत्ता, बिल्ली जैसे तामसी प्राणियों का भी पालन-पोषण नहीं करना चाहिए।

याद रक्खें! सेवा संख्या २० से नीचा कार्य श्री भगवत्-पद प्राप्त महापुरुषों से करवाने से अपने में तथा विश्व में आसुरी सम्पदा की वृद्धि होकर पतन होता रहता है। अपने से अधिक ध्यानमग्न गुणवानों से शारीरिक सेवा लेते रहने से भी अपने में मानसिक रोगों की वृद्धि होती रहगी।

सेवा संख्या १ से २१ तक योग्य पात्रों की अपनी-अपनी सामर्थ्य और योग्यता अनुसार निष्काम भाव पूर्वक करते रहने से ॐ श्री परम पद दायक विश्वपिता आनन्द-मय प्रभु से महान् लाभ होता है। योग्य पात्रों की सेवा न करने से कर्तव्य च्युत होने के कारण महति हानि होती है अर्थात् जीवन तमोगुणी होता जाता है। सकाम भाव पूर्वक की हुई सेवा साधारण फलदायक होती है।

तन, धन और ज्ञान द्वारा श्री महापुरुषों के आदेशानुसार निष्काम भाव पूर्वक सेवा करते रहना श्री आनन्द-शक्ति दायक ॐ आनन्दमय प्रभु पिता जी का आदेश है, श्री गीता अ० ४।३४; ३।२१; २।४७ से ५१।

श्री महापुरुषों का आदर्श व आदेश है कि उत्तम साधक अपने हृदय को आजीवन ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के अनुकूल संयम, सेवा और जप-ध्यान युक्त सर्वगुण सम्पन्न निष्कामी बनावें।

विशेष स्मृति रहे ! श्री गुरु भगवान् द्वारा नियत किया हुआ शारीरिक, आर्थिक अथवा सामाजिक जो कोई भी सेवा कार्य प्राप्त हो, उसे प्रेम-प्रसन्नता एवं समता पूर्वक करते हुए ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय महामंत्र का जप करना तथा सर्वगुण सम्पन्न श्री भगवान् के स्वरूप को याद रखना और जड़-चेतनादि में भगवत् बुद्धि करते रहना परम आवश्यक है। अन्यथा पूर्व के मानसिक रोगों से मुक्त होना सम्भव नहीं।

सेवा कर्ता यदि भगवत् भाव में और निष्काम भाव में त्रुटि करता है, तो वह राजसी कर्म बाहरी फल दायक होने सम्भव हैं। भगवत् भाव व निष्काम भाव पूर्वक की हुई सेवा ही आत्मिक आनन्द मेवा दायक है। ॐ शान्तिमय

सेवा योग सिद्धि का सुगम मार्ग

अमृतमय परम पद दायक सेवायोग के तत्त्व को समझने के लिए, श्रद्धालु भगवत् भक्त, श्री समाधिमग्न महापुरुषों की शरण ग्रहण करते हैं। और वे भक्त सब प्रकार के लाभ-हानि के मनन-विचारों से वैराग्य कर कठपुतलीवत् श्री गुरु भगवान् के ध्येय के अनुसार भीतरी-बाहरी शरीर द्वारा समस्त सात्त्विक कर्म करते हैं।

ॐ शान्तिमय

ॐ श्री प्रभु के दण्ड विधान का ज्ञान

☞ "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन" ☜

सेवा कार्यों पर मानव मात्र का अधिकार हो परन्तु ॐ आनन्दमय प्रभु पिता द्वारा रचित भूमि और पदार्थों पर व्यक्तिगत अधिकार न हो अर्थात् सेवा के अतिरिक्त एक इंच भूमि और एक पैसे पर किसी का व्यक्तिगत रूप से स्वामित्व न हो। यह भगवत् आदेश सुख-शान्ति और आनन्द शक्ति वर्द्धक है। विधि-विधान का और वरदान का ज्ञान श्री गीता अ० २/४७ से ५९ तक प्रकाशित है (*)।

(*) इससे सम्बन्धित ज्ञान "भारत की मर्यादा" के नाम से श्री मानव भाग्य विधाता नामक ग्रन्थ में प्रकाशित है।

उपरोक्त भगवत् विधान की उपेक्षा कर तामसी गुरुओं के ज्ञान से तामसी राजाओं ने भारत देश में सब प्रकार की मर्यादाएँ तामसी बनाईं, तब से निम्नाङ्कित दस प्रकार की बीमारियों से भारत देश का क्रमशः अधःपतन हुआ है।

(१) सम्पत्ति संग्रह का लोभ।
(२) स्वार्थ बुद्धि से हिंसायुक्त व्यवहार।
(३) अनावश्यक भोग विलास।
(४) अत्याधिक सन्तानों की पैदाइश।
(५) ईर्षा-द्वेष।
(६) अकर्मण्यता।
(७) प्रमाद।
(८) अहंकार वृद्धि की अभिलाषा।
(९) घर-घर में कलह और देश में संग्राम।
(१०) दरिद्रता।

उपरोक्त तामसी कर्मों के प्रभाव से मनुष्य श्री गीता अ० १८/ श्लोक ३२ के विधानानुसार विपरीत बुद्धियुक्त, क्रोधी और ठग-व्यवहारी होकर निम्नाङ्कित प्रकार से दण्डनीय होते हैं—

(१) वर्षा, वायु, शीत, गर्मी का समय पर न होना, न्यूनाधिक होना अथवा वे समय पर होना।

(२) बाढ़, ओले, चूहे, टिड्डीदल तथा विभिन्न जीवों द्वारा एवं रोगों द्वारा फसल का नष्ट होना।

(३) भूकम्प, अग्निकांड आदि से अनेक तरह की हानि।

(४) रूई, अन्न आदि पदार्थों की फसल कम होना (दूर देशों की अपेक्षा भारत देश के काश्तकार अशिक्षित हैं न ?)।

(५) दूध-घी, साग, फल मेवा आदि सात्त्विक पदार्थों का ह्रास ।

(६) जड़ी, बूटी आदि औषध-ज्ञान का नाश ।

(७) दुर्गन्ध दायक तथा नशीले और विषैले कृषि जन्य तामसी पदार्थों का विकास (*) ।

(*) ठगी परायण क्रोधी मनुष्यों को श्री प्रभु जी तामसी पेड़-पौदों की खेती करने का विशेष ज्ञान प्रदान करते हैं और तामसी देश के पहाड़ों अथवा वनचर भूमियों में भी श्री प्रभु जी अहितकारी पेड़-पौदों की पैदाइश करते हैं ।

---

(८) गाय, भैंस, भेड़, बकरी जैसे उपयोगी पशुओं का विनाश ।

(९) देश के अधिकांश स्थानों का जल नमकीन, रस रहित, फीका, पाचन-शक्ति रहित, दुर्गन्धयुक्त एवं रोगों के कीटाणुओं से दोषी और तेलिया होता जाता है ।

(१०) नदियों का जल सूख जाना, कुएँ गहरे हो जाना, जमीन में बालू, नमक, कंकर-पत्थर एवं हानिकारक पौदों की पैदावार, भूमि का रस रहित ऊसर होना इत्यादि श्री प्रभु का दण्ड विधान विशेष रूप से राजस्थान में देखें (*) ।

(⊛) जिस देश में ठगधर्मियों को प्रचुर मात्रा में भिक्षा-दान दिया जाता है वह देश शीघ्र दुःखी होता है। ध्यानयोग रहित दान-मान आहारी, होते आए हैं ताड़न-मारन के अधिकारी।

(११) परस्पर कलह-क्लेश—दो व्यक्तियों का भी आपस में प्रेम नहीं दिखाई देता। प्रतिकूल आचरणों से द्वेष बढ़ाकर मनुष्य सामाजिक अथवा मानसिक रोगों में ग्रसित होते रहते हैं।

(१२) मारपीट, झगड़ा, मुकदमेबाजी की वृद्धि होती रहती है।

(१३) विध्वंसकारी संग्रामी शक्तियों के ज्ञान की वृद्धि होती रहती है जैसे वर्तमान में नाईट्रोजन, हाईड्रोजन, एटम, राकेट बम और गैस गोले आदि।

(१४) स्वास्थ्य और दिमाग़ के लिए हानिकारक कोयलों की गैस, डीजलआयल की गैस, पेट्रोल की गैस, बीड़ी-सिग्रेट आदि विषैले पदार्थों की गैसकी वृद्धि होना।

(१५) अनेक प्रकार के ऐश-आराम, शौकीनी-सजावट विषयक ज्ञान की वृद्धि (⊛)।

(⊛) इन विलासिताओं में उन्मत्त रहने वाले भारतके राजा-रानी और जमींदार आदि असुर लोग कितने दुःखी-अशान्त हैं।

(१६) अन्न, धन, वस्त्र, भवन, औषध आदि पदार्थों का कष्ट।

(१७) मकान बनाने अथवा खेती करने के लिए जमीन की कमी, आहार-व्यवहार के लिए शुद्ध जल की कमी, शीतल-मन्द शुद्ध वायु की कमी, जलाने के लिए काष्ठ की कमी, भ्रमण करने के लिए शुद्ध आकाश की कमी।

(१८) जेल, जुरमाना, तथा धन-सम्पत्ति पर राज्य का अधिकार और फाँसी इत्यादि से दण्ड।

(१९) हृदय में दुःख-अशान्ति वर्द्धक चिन्ता, भय, क्रोध, ईर्षा, द्वेष और नाराज़गी आदि मानसिक रोगों द्वारा महादण्ड।

(२०) मन-इन्द्रियों की चंचलता से भयानक परेशानियाँ अर्थात् मानसिक द्वन्द्व विचारों से व्याकुलता (*)।

(*) *मन-बुद्धि का हर समय विक्षेपयुक्त पागल रहना ॐ आनन्दमय प्रभु पिता जी का अत्याधिक दण्ड विधान है।*

---

(२१) मनुष्यों की आयु कम होना। मनुष्यों के साथ-साथ उपयोगी पशु और पेड़-पौदों की आयु भी ॐ आनन्दमय प्रभु जी कम करते जाते हैं।

(२२) सन्तानों की अधिकता (*) से अथवा सन्तानों की मृत्यु से दण्ड ।

(*) भविष्य परिणाम के ज्ञाता ध्यानयोग अभ्यासी श्री सात्त्विक मानव ब्रह्मचर्य का पालन कर, सुख शान्ति का अनुभव करते हैं। राजसी श्रेणी के अज्ञानी मनुष्य एक-दो सन्तान तैयार कर, दुःख-अशान्ति का अनुभव करते हैं।

अति अज्ञान विमोहित तामसी श्रेणी के लोभी मनुष्य अत्याधिक सन्तान तैयार कर, उन बेटे, पोते और नातियों द्वारा आजीवन उबलते रहते हैं। यह उनके दुराचारों का दण्ड विधान है।

सन्तानों द्वारा क्या-क्या और किस-किस प्रकार से दण्ड मिलता है, इस विषय का पूर्ण ज्ञान लिखने से तो एक पुस्तक ही छप जायगी। सन्तान विषयक सार ज्ञान 'श्री मानव भाग्य विधाता' नामक ग्रन्थ में प्रकाशित है। यह ग्रन्थ ... पृष्ठों का है।

---

(२३) आवश्यक नींद का न आना।

(२४) टुंडा, लूला, लंगड़ा, काना, बहरा, अन्धा, गूँगा तथा नाक, कान आदि अंगहीन हो जाना।

(२५) प्लेग, हैजा, तपेदिक, टाईफाइड, इन्फ्लुएंजा, दमा, श्वास, खांसी आदि अनेक बीमारियों का आक्रमण

(२६) शेर, भेड़िया, कुत्ता, सर्प, बिच्छू, मच्छर, मक्खी और नाना विषैले कीट-कीटाणुओं के आक्रमण द्वारा दण्ड (*)।

(*) कामी-क्रोधी प्रकृति के अज्ञानी मनुष्य ही सूअर, कुत्ता, बन्दर, बिल्ली आदि हिंसक प्राणियों की रक्षा वृद्धि करना हितकर समझते हैं, यह उनके दुर्भाग्य का विषय है।

(२७) भयानक रोग, डाक्टरों द्वारा भयंकर आपरेशन और कड़ी दवाइयों का प्रयोग।

भीतरी और बाहिरी रोगों के कारण का ज्ञान

उपरोक्त 'श्री प्रभु के दण्ड विधान' में वर्णित मानसिक रोग तो सर्व प्रथम विषयासक्त पारिवारिक लोगों के दर्शन-श्रवण से प्रारम्भ होते हैं। तत्पश्चात् मानसिक रोगी बालकों के सम्पर्क से दृढ़ होते हैं।

राजसी और तामसी समाज के आदेशानुसार मन, वाणी, शरीर द्वारा कनिष्ठ कर्म करते रहने से वे मानस-रोग बीज-वृक्ष न्याय से बढ़ते रहते हैं। अस्तु,

बाहिरी शरीर के रोग विशेष कर अयुक्त आहार से व अयुक्त श्रम से और छूत से होते हैं। आकाशी मौसम

की विषमता के कारण भी देह सम्बन्धी रोग होते हैं। अतः युक्त आहार-विहार और युक्त श्रम का ज्ञान प्राप्त करने की परमावश्यकता है। अन्यथा औषधियाँ तो कुछ समय के लिए ही हितकर होनी सम्भव हैं।

स्मृति रहे ! महात्मा अथवा पापात्मा, साधक और असाधक कोई भी मनुष्य श्री गीता अ० ६ श्लोक १७ के आदेशानुसार युक्त आहार-विहार न करके श्लोक १६ के अनुसार अयुक्त आहार-विहार करेगा वह तुरन्त अथवा कालान्तर में रोगी होना सम्भव है।

दूर देशों की तुलना में भारत देश के मानव अज्ञान के कारण अत्याधिक रोगी हैं।

स्मृति रहे ! किसी भी मानव का देह सम्बन्धी रोगों से सर्वथा मुक्त रहना सम्भव नहीं। अस्तु,

पूर्वोक्त २७ सूत्रों में प्रकाशित दण्ड विधान पर विश्वास हेतु प्रार्थना की जा रही है कि प्रत्यक्ष देखें—

(१) न्याय व्यवहारी अमेरिका देश (२) उद्योग पूजक चीन देश (३) शिशुवत् प्रजापालक रूस देश (४) बनावटी धर्म अनुरागी अथवा ठग-व्यवहारी भारत देश इन चार देशों में कौनसा देश अधिक सुखी-दुःखी है

रजोगुण प्रधान दूर देशी लोग उद्योग युक्त न्याय-व्यवहारी होने के कारण भोजन-वस्त्र आदि पदार्थों के लिए चिन्तित नहीं और स्वास्थ्य रक्षा सम्बन्धी उत्तम ज्ञान होने के कारण भारत देश से अधिक स्वस्थ हैं तथा सन्तानों की उत्पत्ति अत्याधिक न करने के परिणाम स्वरूप आपसी कलह (घरेलू झगड़ों) से वंचित रहते हैं।

वर्तमान समय में रूस देश के मानव शारीरिक-आर्थिक उन्नतियों में वीर हैं और सामाजिक तथा राज-नैतिक सदाचार में कुशल हैं। यदि उन लोगों को निष्काम भाव पूर्वक सेवा करने के महत्त्व का और ध्यानयोग के प्रभाव का ज्ञान हो जाए तो वह लोग श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु के पद को अतिशीघ्र प्राप्त करने के पात्र हैं।

भारत वासियों को श्री प्रभु चेतावनी

राजा रंक हुए। जमींदारों ने विलाप किया। व्यापार चौपट हुआ। नोट (धन) और इंगलिश भाषा लंदन जा रहे हैं। उर्दू भाषा पाकिस्तान गई। व्यापारी माल संग्रह नहीं कर पाऐंगे। स्वतन्त्रता पूर्वक सोना-चाँदी और जवाहरात रखने वालों को अफीम रखने वालों के सदृश अपराधी समझा जाएगा। धनी-निर्धन समान होंगे।

दान-दक्षिणा और भोजन-भिक्षा की प्रथा लुप्त हो जायगी। उद्योग रहित शिक्षा व्यर्थ होगी। गुण रहित विभिन्न भाषाओं के शब्द-ज्ञान सात्त्विक बुद्धि को नाश कर चंचलता युक्त दिमागी अशान्ति को बढ़ाने वाले समझे जाएँगे। संस्कृत भाषा को ठगी का साधन कथन किया जाएगा। आकाश में देव, भूत, पितर और स्वर्ग, नरक, बैकुण्ठ आदि को प्रतिष्ठा करने वाले धार्मिक ग्रन्थ जाली समझे जाएँगे। जन्म से जाति श्रेष्ठ अथवा जन्म से जाति कनिष्ठ की मर्यादा देश नाशक समझी जाएगी।

विवाह-शादी करने वालों को राज्य-पदों से वंचित रक्खा जाएगा। अत्याधिक सन्तान तैयार करने वालों को और क्रोध करने वालों को दिमाग़ हीन समझ कर हरिजनों के पद पर नियुक्त करना सम्भव है। प्रियता-प्रसन्नता के त्यागी और चिन्ता-नाराज़गी के रागी अध्यापक-अध्यापिकाओं को अध्यापन कार्य से च्युत किया जाएगा।

हरिजन, शूद्र और नारी सभी उच्च पदों के समान अधिकारी होंगे। राज्य विधान में अकर्मण्य, मुफ्तखोर, आलसी और प्रमादी मनुष्य भी देश के शत्रु अर्थात् अपराधी माने जाएँगे। ऐसे मनुष्यों को जेलों में रख कर उपवास कराने की मर्यादा होनी सम्भव है तथा देश द्रोही

तामसी मनुष्यों को अधिक संख्या में जेलों में न रखकर विषपान कराने की मर्यादा होनी सम्भव है।

यदि देश निवासी आपसी कलह का त्याग कर एक मत द्वारा तामसी मर्यादाओं का परिवर्तन नहीं करेंगे तो सम्भव है कि ॐ आनन्दमय प्रभु पिता दूर देशों के शासकों द्वारा तामसी मर्यादाओं का दमन करावें।

विचार करें ! हिन्दू-इस्लामी आपसी कलह से सर्वनाश को प्राप्त हुए तथा पेट में छुरा और माथे पर बुरका देने वाले पददलित इस्लामी पुनः पाकिस्तान में सम्राट हुए। बरमा देश के दुःखों को भूला नहीं जाता। वर्षा की न्यूनाधिकता और पदार्थों का ऐसा अभाव कभी देखा सुना था ? विध्वंसकारी बम, गोले, गैसों की तैयारी है। उपरोक्त घटनाएँ ॐ आनन्दमय प्रभु पिता की सूचनाएँ हैं।

विचार करें ! हैजे की बीमारी फैलने की सम्भावना होती है तो उसके परिणाम के ज्ञाता लोग ज्ञानी डाक्टरों के कथनानुसार इन्जेक्शन ले लेते हैं और जलाशयों में औषधी का प्रयोग करते हैं। किन्तु आलसी बुद्धि के लोग तो आग लगने पर ही कुआँ खोदते हैं।

जो आस्तिक मानव ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय

महामंत्र का जप करते हुए श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ में प्रकाशित ॐ आनन्दमय प्रभु पिता की मर्यादा पालन करेंगे, वे सज्जन सदा-सर्वदा आनन्द-मंगल से रहेंगे। और वही मानव स्थाई सुख-शान्ति युक्त आनन्द-शक्ति के सदाव्रती बनेंगे।

जो देशभक्त व्यवहारिक पदार्थ और खाद्य पदार्थ उत्पन्न कर न्यायपूर्वक व्यवहार करेंगे वह सुख से रहेंगे। अतः प्रत्येक मानव को चाहिए कि वह गुण वर्द्धक ज्ञान को धारण करते हुए उद्योग की शिक्षा प्राप्त करे और पुरुषार्थी व स्वावलम्बी बने। धर्म की आड़ में अकर्मण्य रहने का विधान ॐ आनन्दमय प्रभु का बनाया हुआ नहीं है।

अब वह सात्विक मर्यादा भी निकट आ रही है जब श्री प्रभु की सम्पत्ति रूप तन, धन, जन और ज्ञान पर व्यक्तिगत अधिकार न रह कर देशगत अधिकार रहेगा। इस विधान का नाम है "कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन"।

व्यक्तिगत सम्पत्ति के त्याग से और श्रम के विकास से देश की उन्नति होगी।

देश के महान्भावों के प्रति प्रार्थना है कि कामाग्नि और क्रोधाग्नि से तपायमान छात्र-छात्राएँ आपके सहित देश

के शत्रु बनते जा रहे हैं। अतः बालक-बालिकाओं को आत्मिक अमृत पान करा कर, उनके राजसी-तामसी मनोरंजनों को शान्त कर, उन्हें आनन्द शक्ति सम्पन्न बनाने के लिए श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ (भाग १-२) आपकी सेवा में अर्पण है।

यह श्री ग्रन्थ भगवत् विधान से पूर्ण है और चंचलता विक्षेप युक्त मानसिक पागलपन की चिकित्सा का अचूक नुसखा है। ॐ शान्तिमय

देश का हित और अहित

भारत देश को सम्पत्ति सम्पन्न और आनन्द-शक्ति सम्पन्न कौन बनाएगा ? उत्तर—संयम, सेवा और ध्यानयोग युक्त सुहृद्ता, समता सम्पन्न सात्विक महात्माओं का ज्ञान।

भारत देश को चौपट कौन करेगा ? उत्तर—कामना, क्रोध, लोभयुक्त ईर्षा-द्वेष के रागी तामसी पदाधीशों का ज्ञान।

ब्रह्म-हत्या का ज्ञान

ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के विधान को भंग करने का नाम ब्रह्म-हत्या है। श्री ध्यानमग्न गुणवानों के सदाचारों का और सात्त्विक ज्ञान का खण्डन करना ब्रह्महत्या है।

भगवत् विधान के विरुद्ध नकल वर्णाश्रम की प्रतिष्ठा के कारण भारत निवासी हंस-बुद्धि रहित भेड़-चालयुक्त हो गए हैं। हंस-बुद्धि वही है जो राजसी-तामसी मनुष्यों के गुण-ज्ञान का परित्याग कर श्री सात्त्विक महात्मा के गुण-ज्ञान का आदर करती है परन्तु तामसी बुद्धि के कारण भारत देश में—

(१) दम्भी-पाखण्डियों को तो पण्डित-महात्मा और सच्चे पण्डित-महात्मा को दम्भी-पाखण्डी घोषित किया जा रहा है। इसका नाम है ब्रह्म-हत्या।

(२) सद्गुण-सदाचारी, ध्यान-समाधिमग्न श्री देव-देवाङ्गनाओं को मूढ़-पापात्मा और दुर्गुण-दुराचारी, स्वाङ्गी, वाचालों को ज्ञानी-धर्मात्मा माना जा रहा है। इसका नाम है ब्रह्म-हत्या।

(३) मानव सेवा के त्यागी, ध्यानयोग से अनभिज्ञ महा-आतताई ठगधर्मी तो पूजे जाते हैं और पूजने योग्य गुणवानों की निन्दा, अपमान, तिरस्कार किया जा रहा है। इसका नाम है ब्रह्म-हत्या।

जन्म से जाति श्रेष्ठ और जन्म से जाति कनिष्ठ की मर्यादा अति हिंसात्मक है। इस अहंकार मूलक अपराध का ही यह प्रसाद है जो आज भारतवासी उत्तम, मध्यम और कनिष्ठ स्वभाव के मनुष्यों को पहचानने में असमर्थ हैं। अर्थात् जन्मना श्रेष्ठ-कनिष्ठ जाति की प्रधानता के कारण सात्त्विक, राजसी व तामसी गुण, ज्ञान, भाव, आचरणों की परीक्षा के ज्ञान से अनभिज्ञ हो रहे हैं।

विचार करें! वकील, डाक्टर, अध्यापक अथवा सिपाही पद प्राप्त करने वाले मनुष्य उक्त पदों के अनुसार सर्वमान्य हो जाते हैं अर्थात् जनता उनको जिस पदवी के हैं ऐसा ही मानकर यथायोग्य व्यवहार द्वारा लाभान्वित होती है। किन्तु श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु के सच्चे युवराज, वकील, मानसिक वैद्यराज, आनन्दविद्या के अध्यापक इत्यादि परम सेवा कार्य कर्ता समाधिमग्न महापुरुषों के प्रति विभिन्न विचार किए जाते हैं और उनके साथ तामसी व्यवहार भी किया जाता है।

सद्गुण सम्पन्न अथवा दुर्गुण सम्पन्न मानव की परीक्षा के ज्ञान का ह्रास होने के कारण भारत देश में आनन्द-शक्ति वर्द्धक गुण धर्म की तो उपेक्षा की गई और ठगधर्मियों द्वारा रचे हुए दम्भ-पाखण्डमय चक्रान्ति धर्मों की मर्यादा स्थापित की गई।

उन जाली धर्मों के भँवरजाल में फँसे हुए भारत-वासी सब प्रकार से पतित होकर चिन्तित-क्रोधित और भयातुर होते जा रहे हैं।

मानव सेवा के त्यागी ध्यान-समाधि से अनभिज्ञ तामसी मनुष्यों को संन्यासी मानना, संस्कृत भाषा रटन मात्र से विद्वान मानना, प्राचीन संतों के गुणों की व्याख्या करने मात्र से गुणवान् मानना, काम व लोभ वृत्ति से प्रतिमाओं को सुशोभित करते रहने से पुजारी मानना, मृतक पितरों की जाली मुक्ति कराने वालों को तीर्थ पुरोहित मानना इत्यादि क्या श्री गीता शास्त्र का विधान है ?

सर्वगुण सम्पन्न ब्रह्मदर्शी विद्वानों का कथन है कि संयम, सेवा और ध्यान-समाधि के त्यागी पण्डित-महात्मा कहलाने वाले लोग वेदाचारी रावण के सदृश तामसी हैं। अतः कामी, क्रोधी, लोभी पण्डे-पुजारी, साधु-संन्यासी हैं भारतनाशी !

स्मृति रहे ! धर्म का उपदेश करने वाला यदि स्वयं चिन्ता, क्रोध, भय और रुदन युक्त नाराज़ मुद्रा का दर्शन कराने वाला है तो उसके धार्मिक वचनों से आनन्द, शान्ति, और मुक्ति वैसे ही प्राप्त होगी जैसे एक राजद्रोही डाकू से राजपद ।

विचार करें ! धर्म के नाम पर बनावटी महात्मा के वचनों पर विश्वास करने वाली सीता माता ने दण्ड भुगतने के लिए लंका में निवास किया था ।

अन्ध श्रद्धा का त्याग न करना तमोगुणी मनुष्यों का लक्षण है । भारत के बनावटी धर्मी लोग नाना प्रकार के दण्डों द्वारा दीर्घकाल से पीड़ित होते आए हैं । अन्ध-श्रद्धा के स्थापक (दान-भिक्षा आहारी) तामसी लोग मृत्यु को स्वीकार करते हैं, परन्तु अहंकार का त्याग नहीं करते ।

वर्तमान में ॐ आनन्दमय प्रभु जी राज-विधानाचार्य पण्डितों द्वारा ही अन्ध-श्रद्धामय तामसी धर्मों को निर्मूल करा रहे हैं । अस्तु,

ब्रह्म-हत्या का प्रभाव

विचार करें ! जब चोर चोरी करने जाता है तो चाँद के प्रकाश से अपने कार्य में बाधा आती देखकर सोचता है कि सूर्य-चाँद को नष्ट कर दूँ । यदि वह सूर्य-चाँद को नष्ट

कर दे तो उसको गर्मी, प्रकाश, शीत-वर्षा के विक्षेपों द्वारा अत्याधिक कष्ट होगा और उसके साथ-साथ प्राणी मात्र को भी समान रूप से कष्ट होगा।

ऐसे ही अपनी अज्ञानता से सद्गुण-सदाचारी ध्यान-मग्न श्री देव-देवाङ्गनाओं को कष्ट पहुँचाने वाला अथवा उनके शरीर को नष्ट कर देने वाला भी परम आनन्द और परम शान्ति से वंचित रहेगा।

स्मृति रहे ! उस ब्रह्म-हत्या रूप महापाप के दण्ड से वह मनुष्य जीवित अवस्था में ही सब प्रकार के संकटों से पीड़ित हो कर महाघोर दुःखमय-अशान्तिमय हो जायगा। और मृत्यु के पश्चात् दुःखदायक नीच योनियों में भ्रमण करता हुआ जन्म-जन्मान्तर में महादुःखी होगा (विधान धारा श्री गी० अ० १८/३५ और १६/१९, २० में प्रकाशित है)। इस ब्रह्म-हत्या के प्रभाव से सम्पूर्ण जीव भी दुःखी-अशान्त हो जाएँगे।

क्योंकि श्री ध्यानमग्न सात्त्विक मानवों के आदर्श गुणों के दर्शन, श्रवण, स्मरण और अनुकरण से ही सब प्रकार के सुख-शान्ति दायक गुण, ज्ञान और आनन्द-शक्ति की प्राप्ति होने का विधान है।

स्मृति रहे ! ब्रह्म-हत्या पाँच प्रकार से होती है ।

(१) श्री महापुरुषों के उपदेश, आदेश और आज्ञा की अवहेलना करना ब्रह्म-हत्या है ।

सावधान ! ब्रह्मज्ञानी सत्य महापुरुष कहलाने के पात्र वे ही मानव हैं जिनके लक्षण श्री गीता अध्याय १२/१३ से १६; २/५५ से ५६; १४/२२ से २५; १८/४२ के अनुसार हों ।

(२) श्री ध्यानमग्न देव-देवाङ्गनाओं के सात्त्विक आचरणों का मन, वाणी और शरीर से अनुकरण न करना ब्रह्म-हत्या है (*) ।

(*) शंका समाधान—यदि आप श्री भगवत् अनुकूल चलने वाले सात्त्विक मानवों के गुण वर्द्धक ज्ञान में अश्रद्धा करते हैं तो ॐ आनन्दमय प्रभु के प्रतिकूल चलने वाले राजसी-तामसी मनुष्यों के दुर्गुण-दुराचारों को धारण करने में आपकी श्रद्धा है । परन्तु स्मृति रहे ! राजसी-तामसी कर्मों का फल दुःख-अशान्ति दायक होने का विधान है । श्री गीता अ० २/६२, ६३; अ० १४/१२, १६; अ० १६/६ से २१ तथा अ० १८/३५, ३८, ३६ में देखें ।

---

(३) श्री विश्व-हितैषी सद्गुण-सदाचारी मानव की निन्दा, अपमान, तिरस्कार करना और उनके दिव्य गुणों में

दोष देखना तथा कानों से प्रेम-पूर्वक श्रवण करना ब्रह्म-हत्या है।

(४) श्री दैवी-सम्पदावान् महात्माओं के शरीर को मन, वाणी और शरीर द्वारा कष्ट पहुँचाने का प्रयत्न करना ब्रह्म-हत्या है।

(५) श्री न्यायकारी दयालु पुरुषों के शरीर को मनसा, वाचा, कर्मणा शान्त कर देना और शान्त होने पर हर्षित-प्रसन्न होना ब्रह्म-हत्या है। जैसे श्री न्यायवक्ता दयालु गाँधी जी के साथ तामसी आचरण किया गया (*)।

(*) क्या श्री गाँधी जी के साथ तामसी आचरण करने वाले आनन्द शक्ति सम्पन्न हुए ?—नहीं उस ब्रह्म-हत्या के प्रभाव से वे लोग पीढ़ियों तक दुःखी-अशान्त रहेंगे।

ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के शीघ्र द्रोही बनने के उपरोक्त पाँच सूत्र पढ़ने में सुगम होते हुए भी इनका ज्ञान इतना गूढ़ है कि बारम्बार पठन-मनन करते रहने से ही समझ में आना सम्भव है।

स्मृति रहे ! करोड़ों राजसी मनुष्यों का वध करने से भी अधिक पाप और विश्व में महती हानि एक श्री

ध्यानमग्न सत्त्वगुणी मानव के वध करने से होती है तथा हजारों सत्त्वगुणी मानवों का वध करने से भी अधिक हानि एक श्री प्रभु के युवराज पद दायक समाधिमग्न गुणातीत महापुरुष का वध (*) करने से होती है। श्री प्रभु शक्ति के सन्मुख बम शक्तियाँ भी तुच्छ हैं।

(*) इस भयानक महाघोर ब्रह्म-हत्या के दण्ड का विस्तार ज्ञान पृष्ठ ७३ से ८५ तक तथा पृष्ठ ६४ से ६८ तक पढ़ें।

श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु जी सर्वज्ञ हैं और वह समता सम्पन्न आत्मज्ञानी के लिए प्रेममय हैं। सेवायोग व ध्यानयोग परायण भगवत् पदाधिकारियों के लिए सुहृदमय हैं। राजसी मनुष्यों के लिए न्यायकारी हैं और तामसी मनुष्यों के लिए केवल दण्ड दायक हैं।

ज्ञान करें! ॐ आनन्दमय प्रभु सबके हृदय में साक्षी के सदृश स्थित हुए हमारे जीवन में किए हुए कर्तव्य-अकर्तव्यों को हर समय याद दिला रहे हैं।

विश्वास करें! कीट, पतंग, सर्प, पक्षी, सियार, सुअर, कुत्ता, गधा आदि लाखों योनियों में भ्रमण करते-करते अमूल्य मनुष्य शरीर मिला है। अतः अब मनसा, वाचा, कर्मणा सावधानी के साथ भगवत् विधान को पालन करते रहना है। ॐ शान्तिमय

श्री संत चेतावनी

(सुखमनी साहब से)

(१) सन्त को दूषरा लगाने से आयु कम होती है।
(२) सन्त को दूषरा लगाने से सब सुख दूर हो जाता है।
(३) सन्त को दूषरा लगाने से बुद्धि मलिन हो जाती है।
(४) सन्त को दूषरा लगाने से जीव शोभा से रहित हो जाता है।
(५) सन्त के फिटकारे हुए की कोई रक्षा नहीं कर सकता।
(६) सन्त को दूषरा लगाने से जीव स्वस्थान् से भ्रष्ट हो जाता है।
(७) सन्त को दूषरा लगाने से मुख फिर जाता है।
(८) सन्त को दूषरा लगाने से काक सम बोलता है।
(९) सन्त को दूषरा लगाने से सर्प योनि पाता है।
(१०) सन्त को दूषरा लगाने से कीड़े आदि टेढ़ी योनि पाता है।

(११) सन्त को दूषण लगाने से तृष्णा रूप अग्नि में जलता है।

(१२) सन्त को दूषण लगाने वाले को हर एक जीव कपटी प्रतीत होता है।

(१३) साधु को दूषण लगाने से सब प्रताप नष्ट हो जाता है।

(१४) साधु को दूषण लगाने से जीव महा नीच से नीच हो जाता है।

(१५) सन्त दोषी का कोई ठिकाना नहीं है।

(१६) सन्त निन्दक अत्याचारी है।

(१७) सन्त निन्दक क्षण मात्र भी कहीं ठहरने नहीं पाता।

(१८) सन्त निन्दक महा हत्यारा है।

(१९) सन्त निन्दक परमेश्वर का मारा हुआ है।

(२०) सन्त निंदक तेज प्रताप से विहीन होता है।

(२१) सन्त निंदक दु:खी और दीन होता है।

(२२) सन्त निंदक को सब रोग लगते हैं।

(२३) सन्त निंदक को सदा (प्रभु से) वियोग रहता है।

(२४) सन्त निंदा दोषों में सबसे बड़ा दोष है।

(२५) सन्त दोषी सदा अपवित्र है।

(२६) सन्त दोषी किसी का मित्र नहीं बनता।

(२७) सन्त दोषी को (परमात्मा का) दण्ड लगता है।

(२८) सन्त दोषी को सब त्यागते हैं।
(२९) सन्त दोषी महा अहङ्कारी है।
(३०) सन्त दोषी सदा विकारों में रहता है।
(३१) सन्त दोषी जन्मता और मरता है।
(३२) सन्त को दूषण लगाने से जीव सुख-विहीन रहता है।
(३३) सन्त दोषी अर्ध बीच से टूटता है।
(३४) सन्त दोषी का कोई कार्य पूर्ण नहीं होता।
(३५) सन्त दोषी उद्यान में रास्ता भूले हुए की तरह भटकता है और कुमार्ग में पड़ा रहता है।
(३६) सन्त दोषी अन्दर से खाली, भाव सब गुण रहित होता है। जैसे श्वास बिन मृतक शरीर होता है।
(३७) सन्त दोषी का कुछ मूल नहीं होता।
(३८) सन्त दोषी अपने किये का ही फल भोगता है, भाव यह कि मन्द कर्मों के मन्द फल को आप भोगता है।
(३९) सन्त दोषी का और कोई रक्षक नहीं है।
(४०) सन्त दोषी इस प्रकार विलाप करता है, जैसे जल विहीन मछली तड़पती है।
(४१) सन्त दोषी सर्वदा भूखा है, तृप्त नहीं होता, जैसे अग्नि काष्ठ से तृप्त नहीं होती।
(४२) सन्त का दोषी इकेला ही रह जाता है। जैसे तिलों के खेत में बुआढ़ दुःखी रहता है।

(४३) सन्त दोषी धर्म रहित होता है।

(४४) सन्त दोषी सर्वदा मिथ्या वचन बोलता है।

(४५) सन्त का दोषी भ्रष्ट-मुख हो जाता है।

(४६) सन्त का दोषी सदा सहकता है अर्थात् संत-दोषी न मरता है, न जीता है, भाव यह कि अति दुःखी होता है।

(४७) सन्त दोषी की आशा पूर्ण नहीं होती।

(४८) सन्त दोषी संसार से निराश ही उठ कर जाता है।

(४९) सन्त को दूषण लगाने वाला कोई स्थिर नहीं होता।

याद रक्खें! सन्त के दोखी (निन्दक) का श्री ध्यान-समाधिमग्न सन्तोषी-समतावान संत के शरणागत होने से ही प्रायश्चित होने का विधान है। अर्थात् जिस भगवत् भक्त का अपराध किया हो उससे ही क्षमा प्रार्थना करते हुए, उसके आदेशानुसार आजीवन कठपुतलीवत् संग, सेवा, स्वाध्याय और जप-ध्यान आदि साधन करते रहने से ही हृदय में शान्ति होगी।

हे भगवत् आनन्द-शक्ति अभिलाषी वीर-वीराङ्गनाओ। वर्तमान में पण्डित, महात्मा, पण्डे, पुजारी, साधु-संन्यासी अथवा मौलवी साहब, पादरी साहब आदि

परम प्रभावशाली नामों की उपाधि लेने वालों में -रावण-कालनेमी के सदृश काम, क्रोध, लोभ युक्त दुराचारी लोग बहुत हो गए हैं।

स्मृति रहे ! जो मनुष्य श्री सज्जनों के संग, सेवा और ध्यान-समाधि के त्यागी हैं तथा प्रेम, प्रसन्नता, सहनशीलता, समता, सन्तोष आदि गुणों से रहित हैं तथापि गुरु उपदेशक बने हुए हैं, ऐसे बुद्धि के डाकू, अकर्मण्य तामसी लोग तो अवश्य ही जनता से निन्दा-तिरस्कार के पात्र हैं और राज्य द्वारा मृत्यु दण्ड के भी पात्र हैं।

ॐ शान्तिमय

सत्य विरोधी असत्यवादी का शीघ्र पतन होने का विधान है (*)।

(*) ॐ श्री प्रभु पिता के दण्ड विधान का विस्तार ज्ञान पृष्ठ ७३ से ६७ तक प्रकाशित है।

संन्यासी और पण्डित शब्द का ज्ञान

"सर्व संकल्प संन्यासी", "पण्डिताः समदर्शिनः"

ब्रह्मदर्शी, आत्मज्ञानी, समाधिमग्न भगवत् पदाधीश महापुरुषों को सद्ग्रन्थों में 'संन्यासी' और 'पण्डित' शब्द से सम्बोधित किया है।

दुर्गुण-दुराचार रूप मानसिक रोगों के नाशक और भगवत् आनन्द-शान्ति युक्त आत्मिक शक्ति दायक श्री मानसिक वैद्यराज को 'संन्यासी' और 'पण्डित' कहा है।

दिव्य शान्तियुक्त अखण्ड आनन्द में मग्न सद्गुण-सदाचार के अध्यापक को 'संन्यासी' और 'पण्डित' कहा है।

भौतिक अहंता, ममता, आसक्ति, स्वार्थ और परमार्थ भाव के त्यागी, विशुद्ध प्रेमी महात्मा 'संन्यासी' और 'पण्डित' कहलाने के पात्र हैं (*)।

(*) स्मृति रहे! संन्यासी और पण्डित शब्द भिन्न-भिन्न प्रतीत होते हैं परन्तु भगवत् विधान में एक ही परमपद के द्योतक हैं। जाति से, भेष से अथवा संस्कृत भाषा रटन मात्र से जो

भिन्नता प्रसिद्ध कर रक्खी है यह गुण रहित नकली पण्डितों का और नकली संन्यासियों का अहंकार मात्र है।

राज्य कार्यकर्ता महापुरुष श्री कृष्ण भगवान् स्वयं 'संन्यासी' व 'पण्डित' पद को प्राप्त थे और गीता शास्त्र में स्थान-स्थान पर श्री महापुरुष भगवान् ने मानव मात्र के प्रति अपने ही समान गुण, ज्ञान युक्त आनन्द-शक्ति सम्पन्न बनने की विधि और विधान बतलाया है।

श्री गीता प्रमाणित संन्यासी के लक्षण निम्नाङ्कित हैं।

ज्ञेयः स नित्यसंन्यासी यो न द्वेष्टि न कांक्षति।
निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बन्धात्प्रमुच्यते॥ ५। ३॥

भावार्थ—जो मानव इन्द्रियों के विषय भोग प्राप्त करने की कामना नहीं करता, अहंता-ममता के भाव से धन-जन प्राप्त करने की इच्छा नहीं करता, मान, बड़ाई, प्रतिष्ठा की अभिलाषा नहीं करता अथवा विश्व सेवार्थ धन, जन, यश, मान, प्रतिष्ठा आदि के प्राप्त होने पर द्वेष नहीं करता और प्राप्त धन, जन, यश, मान, प्रतिष्ठा आदि के नष्ट होने पर भी द्वेष नहीं करता, जो हर्ष-शोक आदि द्वन्द्वों से लिपायमान नहीं है, जो राजसी-तामसी मनुष्यों के गुण, ज्ञान, भाव, आचरणों के बन्धनों से मुक्त है, जो समाधि जन्य आत्मानन्द में मग्न है, ऐसा महात्मा

श्री देवी स्वरूपा हो अथवा पुरुष स्वरूप हो वही सच्चा संन्यासी कहलाने का पात्र है।

इसके विपरीत लक्षणों से युक्त स्वाङ्गी, वाचाल, राजसी-तामसी मनुष्यों को साधु-संन्यासी न समझो।

उपरोक्त लक्षणों का विस्तार ज्ञान श्री गीता अ० १४ श्लोक २० से २५ तक गुणातीत के नाम से प्रमाणित है। अतः 'संन्यासी' शब्द गुणातीत महापुरुष का वाचक है।

गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः। श्री गी० २/११
पण्डिताः समदर्शिनः ५/१८।

भावार्थ—समदर्शी पण्डित धन, जन, यश, मान, प्रतिष्ठा आदि के नाश होने पर चिन्ता-शोक नहीं करते और जो भौतिक सम्पत्ति विद्यमान है उसके लिए भी चिन्ता-शोक नहीं करते। अर्थात् श्री ज्ञानवान पण्डित अनुकूल-प्रतिकूल दोनों अवस्थाओं में निश्चिन्तता और निर्भयता के साथ सम, शान्त, प्रसन्न रहते हैं (*)।

ॐ आनन्दमय प्रभु के मंगलमय विधान से अनभिज्ञ लोग ही चिन्ता-शोक करते हैं।

(*) पण्डित-संन्यासी के गुण-प्रभाव का पूर्ण ज्ञान पृष्ठ ९९ से १३२ तक प्रकाशित है।

यह साधु-असाधु, पण्डित-मूर्ख, आस्तिक-नास्तिक, भक्त-अभक्त अथवा धर्मात्मा-पापात्मा की पक्की पहचान है।

प्राचीन काल में समदर्शी पण्डितों द्वारा शिक्षा प्राप्त कर श्री महात्मा राम और श्री कृष्ण ने सर्वगुण सम्पन्न संन्यासी-पण्डित पद को प्राप्त होकर अपने प्रिय भक्तों को कैसे पण्डित-संन्यासी बनाया इसके श्री गीता और रामायण ग्रन्थ साक्षी हैं।

वर्तमान के बनावटी संन्यासियों के लक्षण निम्नाङ्कित श्लोकों में प्रमाणित हैं :—

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन्।
इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते॥ ३/६॥
नियतस्य तु संन्यासः कर्मणो नोपपद्यते।
मोहात्तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तितः॥ १८/७॥
न निरग्निर्न चाक्रियः॥ ६/१॥

इन श्लोकों के लक्षणयुक्त बनावटी साधु-संन्यासियों का जीवन ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के दण्ड विधान से गीता अ० १८/३५ के अनुसार तामसी हुआ है।

इन लाखों संन्यासियों के अहंकार को उनके भक्तों द्वारा ही दमन कराकर श्री न्यायकारी प्रभु ने उन्हें चिन्ता, क्रोध, भययुक्त दुःखमय-अशान्तिमय बना दिया है।

अब राज्य विधान के द्वारा व्यक्तिगत रूप से धन

सम्पत्ति का अभाव कर मनुष्यमात्र को ज्ञान-शक्ति अनुसार सेवा कार्य करना होगा। यह सब ॐ श्री आनन्दमय प्रभु जी की कृपा से मंगलकारी हो रहा है।

वर्तमान में भारत देश की जनसंख्या में संन्यासी-पण्डित पद प्राप्त केवल एक ही भगवत् स्वरूप विश्व की सेवा में विद्यमान है, और श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ की शिक्षा द्वारा विश्व के भाग्य को उदय करने वाले सेवायोग और ध्यानयोग के ज्ञाता-दाता श्री देव-देवाङ्गनाएँ तैयार हो रहे हैं। अस्तु,

श्री महापुरुषों के अनुगत संग, सेवा और स्मरण-ध्यान के प्रभाव से मनुष्य सम्पूर्ण दुःख-अशान्ति दायक क्लेशों से मुक्त होकर आनन्द-शक्ति सम्पन्न भगवत् पदाधीश बनता है। इस अमृतमय परमपद के अतिरिक्त आनन्द-शक्ति प्राप्त करने योग्य दूसरा पद श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु की सृष्टि में नहीं है।

भगवत् पद के बिना राज का बड़े से बड़ा पद भी चिन्ता, क्रोध, भय और नाराज़गी दायक है। अतः मनुष्य मात्र को और विशेषकर विद्यार्थी समाज को भगवत् विधान के ज्ञाता होने की शिक्षा श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ द्वारा प्राप्त करने की प्रार्थना है। ॐ शान्तिमय

वर्ण धर्म का ज्ञान

सद्‌गुण-सदाचार सम्पन्न हरिजन, शूद्र और नारी सभी हों आदर सम्मान के अधिकारी तथा दुर्गुण-दुराचार सम्पन्न पण्डित-महात्मा भी हों ताड़न के अधिकारी।

(यह भगवत् विधान है)

अनादिकाल से संग, सेवा, स्मरण और प्रेम के प्रभाव से मानव-जाति में चार प्रकार के भाव प्रकट होते आये हैं। जिनमें विशुद्ध-प्रेमभाव और परमार्थ भाव तो हमारे रचयिता श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु की मर्यादा के अनुकूल हैं एवं स्वार्थभाव तथा धोकाभाव प्रतिकूल हैं। इन चारों भावों को लेकर ही मनुष्यों को क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य व शूद्र नामों से ज्ञानवानों ने सम्बोधित किया है।

श्री गीता शास्त्र में उक्त चार प्रकार के भावों का विस्तार पूर्वक वर्णन करते हुए उन्हें तामसी, राजसी, सात्त्विक और गुणातीत नाम से भी सम्बोधित किया है।

श्री गीता प्रमाणित चार प्रकार के भाव निम्नाङ्कित हैं:—

(१) तमः (धोकाभाव—शूद्र (*) ।

(२) रजः (स्वार्थभाव—वैश्य) ।

(३) सत्त्वम् (परमार्थभाव—क्षत्रिय) ।

(४) गुणातीतः (विशुद्ध प्रेमभाव—ब्राह्मण) ।

(*) संयम, सेवा के त्यागी ध्यानयोग रहित बनावटी धर्मियों को और ठग व्यवहारी, क्रोधी तामसी मनुष्यों को धोखा देना पाप नहीं। जैसे सूपनखा, बालि आदि तामसी मनुष्यों को धोखा देने का महापुरुष श्री राम का इतिहास है।

इन तामसी-राजसी भावयुक्त आसुरी-सम्पदावान मनुष्यों को कनिष्ठ श्रेणी में माना गया है तथा सात्त्विक और गुणातीत दैवी-सम्पदावान भक्तों को श्रेष्ठ श्रेणी में समझा गया है।

प्रश्न—तामसी, राजसी, सात्त्विक और गुणातीत मानव की पहचान क्या है।

उत्तर—(१) तमोगुणी (राक्षस) मनुष्य चिन्ता-क्रोध युक्त अशान्तिमय होते हैं, इनको 'शूद्र' समझें। इन महामूर्खों के लक्षण गीता अ० १४/८, १३; अ० १८/२२,

२५, २८, ३२, ३५, ३९ में तामसी शब्दों से प्रमाणित हैं। ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के दण्ड विधान में तामसी मनुष्यों का जीवन, महाघोर कारावास का जीवन है।

(२) रजोगुणी (असुर) मनुष्य हर्ष-शोकादि द्वन्द्वों से लिपायमान चंचल रहते हैं। इन संशययुक्त भ्रमितचित्त वाले राजसी मनुष्यों को 'वैश्य' समझें। इन अज्ञानियों के लक्षण गीता अ० १४/७, १२; अ० १८/२१, २४, २७, ३१, ३४, ३८; में राजसी शब्दों से प्रमाणित हैं। ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के दण्ड विधान में राजसी मनुष्यों का जीवन, श्री प्रभु की जेल का जीवन है।

(३) सतोगुणी (श्री देव) मानव सेवायोग-ध्यानयोग परायण प्रेम-प्रसन्नता युक्त रहते हैं। इन ज्ञानवानों को असल 'क्षत्रिय' समझें। आपका आदर्श गुण गीता अ० १४/६, ११; अ० १८/२०, २३, २६, ३०, ३३, ३६, ३७ और ४३ में सात्त्विक शब्दों से प्रमाणित है। ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के विधान में सात्त्विक भक्तों के लक्षण श्री प्रभु के पदाधीश के लक्षण हैं।

(४) गुणातीत (श्री महादेव) सुहृदता-समता गुण-युक्त श्री समाधिमग्न, आनन्दमय-शान्तिमय महापुरुषों को असल 'ब्राह्मण' समझें। श्री आपका आदर्श जीवन गीता

अ० २/५४ से ५६; १४/२१ से २५ एवं १८/४२ के लक्षणयुक्त प्रमाणित है। श्री गुणातीत महा मानव ॐ आनन्दमय प्रभु का साकार स्वरूप माना गया है (*)।

(*) "ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्" अ० ७/१८ परन्तु ज्ञानी तो साक्षात् मेरा स्वरूप ही है।

श्री ब्राह्मण-पद प्राप्त ज्ञानी महापुरुषों में ऐसी श्रद्धा कर जो साधक श्री श्रद्धेय देव के अनुकूल मनसा, वाचा, कर्मणा आचरण करेगा वह मानव ब्राह्मण-पद को प्राप्त होगा। इससे सम्बन्धित ज्ञान पृष्ठ ६६ से १३२ तक प्रकाशित है।

उपसंहार

वर्तमान की धार्मिक समाज के साधु-संन्यासी, पण्डित, पंडे पुजारी, पुरोहित, ज्योतिषी एवं गुरु, उपदेशक व कथावाचकों में प्रायः राजसी-तामसी प्रकृति के ही लोग हैं। जिनके धार्मिक आदेश और आदर्शों के प्रभाव से भारत देश चिन्ता-क्रोधयुक्त तमोगुण प्रधान हुआ है। भारत देश के 'दुःखधाम' और 'कलहधाम' होने का मुख्य कारण यही है।

अनुभवरहित कथा-वाचकों तथा गुण-रहित उपदेशकों को ही दम्भी-पाखण्डी कहा है। महापापात्मा दम्भी-पाखण्डियों के संग, सेवा और उनके बनाए हुए धर्मा-

चरणों से मनुष्य चिन्ता, क्रोध, भय, रुदन युक्त दुःखमय-अशान्तिमय बन जाता है।

जैसे वर्तमान में बनावटी धर्मियों को प्रचुर मात्रा में दान-भिक्षा देने वाले धर्मानुरागी राजा रंक हुए; पाकिस्तान के धनियों ने और जमींदारों ने विलाप किया; मकान मालिक रुदन कर रहे हैं तथा झूठ, कपट, रिश्वत आदि हिंसा से संग्रह की हुई शेष धन सम्पत्ति भी देशगत हो रही है इत्यादि प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

ज्ञान करें और सावधान रहें!

(१) जिस मनुष्य का जीवन क्रोधाग्नि से तपायमान होकर दुःखमय-अशान्तिमय है, वही असल 'शूद्र' है।

(२) जिस मनुष्य का जीवन कामनाओं से तपायमान होकर हर्ष-शोक युक्त दुःखी-अशान्त है, वही असल 'वैश्य' है।

(३) जिस श्री मानव का जीवन प्रेम-प्रसन्नता युक्त सेवायोग और ध्यानयोग परायण सुखी-शान्त है, वही असल 'क्षत्रिय' है।

(४) जिस श्री आनन्द-शक्ति के दाता महामानव का जीवन सुहृदता-समता युक्त समाधिमग्न आनन्दमय-शान्तिमय है, वही असल 'ब्राह्मण' है।

श्री समाधिमग्न सन्तोषी-समतावान शूद्र व नारी, सभी हों पूजन के अधिकारी एवं सूपनखा, रावण, कालनेमी जैसे तामसी पण्डित-महात्मा भी हों ताड़न के अधिकारी।

स्मृति रहे ! जैसे तामसी प्रकृति होने के कारण इस्लामी वक्ताओं (मौलवियों) से हिन्दू लोग वैराग्य करते हैं वैसे ही ध्यानयोग जनित भगवत् आनन्द-शक्ति रहित, कामी-क्रोधी हिन्दू वक्ताओं से भी वैराग्य करना हितकर है।

सात्त्विक और राजसी-तामसी मर्यादा का ज्ञान

ॐ आनन्दमय भगवान् की मर्यादा अनुसार भगवत् आनन्द-शक्तियुक्त सर्वगुण सम्पन्न मानव को श्रेष्ठ मानने का विधान है।

दूर देशों के राजसी लोग भौतिक ज्ञान-शक्ति अनुसार मानव को श्रेष्ठ मानते हैं। यह राजसी मर्यादा ॐ आनन्द-मय प्रभु के अनुकूल नहीं।

तामसी ज्ञान की मर्यादा अनुसार जन्म से वैश्य धन का स्वामी, जन्म से क्षत्री शासन के अधिपति, जन्म से ब्राह्मण पूजन के अधिकारी एवं जन्म से शूद्र और नारी ताड़न के अधिकारी तथा सेवायोग

और ध्यानयोग के त्यागी मनुष्य "संन्यासी पद" के अधिकारी मानने की प्रथा अति हिंसात्मक है।

भारत में लगभग ५ करोड़ व्यक्ति ही ऐसे हैं जो उपरोक्त तामसी मर्यादाओं में श्रद्धा करते हैं इसका नाम है अन्ध-श्रद्धा। ऐसे अन्ध श्रद्धालु मनुष्यों में प्रायः १ करोड़ व्यक्ति तो दान आहारी हैं जिनकी ये सव लीलाएँ हैं।

ज्ञान करें! अब ॐ आनन्दमय प्रभु जी राज कार्यकर्ता पण्डितों द्वारा भारत देश की तामसी मर्यादाओं का दमन करवा रहे हैं।

सर्वज्ञ न्यायकारी श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु का अटल विधान है कि मनुष्य जैसे भाव वाले व्यक्ति का संग, सेवा, स्मरण-प्रेम व आज्ञापालन करेगा, वह भी उसी के सदृश बनता जायगा।

अतः जीवन में सुख, शान्ति और आनन्द-शक्ति के अभिलाषी श्रद्धालु मानवों का परम कर्तव्य है कि वे श्री समता-सन्तोषयुक्त (समाधिमग्न) महापुरुषों के अथवा प्रेम-प्रसन्नता युक्त श्री भगवत् पदाधिकारी ध्यानमग्न भक्तों के आदर्शयुक्त आदेशों को धारण करें।

चिन्तित-क्रोधित अथवा हर्ष-शोकादि द्वन्द्वों से लिपायमान संक्रामक मानसिक रोगी मनुष्यों के आदर्शों का सर्वथा त्याग कर दें अन्यथा आपका तथा आपकी सन्तानों का जीवन दुःखमय-अशान्तिमय बनता जायगा।

आगे जैसी आपकी श्रद्धा हो, वैसा ही करें। अनुभवी महानुभावों के साथ कुतर्क-वितण्डावाद करना तो तामसी आचरण है अर्थात् महान् 'ब्रह्महत्या' पाप है। अनुभव रहित उपदेश देना भी महापाप है।

स्मृति रहे ! अपने हृदय में वैर-द्वेष युक्त क्रोध की ज्वाला प्रज्वलित हो रही है तो समझ लें कि मेरे हृदय में विराजमान ॐ आनन्दमय प्रभु का मुझ पर अति दण्ड विधान लागू हो रहा है और यदि कामना-ईर्षा वर्द्धक राजसी संकल्प-विकल्प मंथन कर रहे हैं तो समझ लें कि मैं ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के विधान को भंग कर रहा हूँ। मेरा जीवन चिन्ता और नाराज़गी युक्त दुःखी-अशान्त रहेगा। ॐ शान्तिमय

बालक, वृद्ध, युवा' नर-नारी,
ध्यानमग्न भक्त हैं ब्रह्मज्ञान और मंत्र देने के अधिकारी।

श्री ब्राह्मण-पद का ज्ञान

श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु के युवराज पद प्राप्त महापुरुषों को ब्राह्मण नाम से सम्बोधित किया है (ब्रह्म जानाति ब्राह्मणः)।

जो मानव ध्यान-समाधिदायक सन्तोषी-समतावान् तत्त्वदर्शी महापुरुषों की शरण ग्रहण कर, उनके आदेशानुसार श्री गीता अ० १३/७ से ११ और अ० १८/५० से ५५ तक में वर्णित कर्मयोग (सेवायोग), ध्यानयोग, समाधियोग (ज्ञानयोग) द्वारा उक्त सात्त्विक गुण, ज्ञान, भाव, आचरणों का अनुष्ठान करता है वह महामानव ब्रह्म साक्षात्कार व आत्मबोधयुक्त अपने गुणातीत आनन्दमय-शान्तिमय स्वरूप का अनुभव कर स्वयं आनन्दस्वरूप बन जाता है। इस "ब्राह्मी स्थिति" को ब्राह्मण कहा है।

वही महामानव 'ब्राह्मण' कहलाने का पात्र है जिसके संग, सेवा, स्मरण और आज्ञापालन से दुःख-अशान्तिमूलक काम, क्रोध, ईर्षा, द्वेष और चिन्ता, नाराज़गी आदि

समस्त मानसिक रोगों को निवृत्त करने का ज्ञान हो तथा ध्यानयोग-सेवायोग जनित आनन्द-शक्तियुक्त सुख-शान्ति की वृद्धि होने का अनुभव हो।

श्री 'ब्राह्मण-पद' प्राप्त महामानव के लक्षण अर्थात् गुण, ज्ञान, भाव, आचरण श्री गीता अ० १८/४२ में प्रमाणित हैं।

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्॥

शमः—शमः शब्द समता का वाचक है। द्वन्द्वों में समचित रहने का नाम समता है। सेवायोग, ध्यानयोग और समाधियोग का अभ्यास करते-करते साधक को ॐ आनन्दमय प्रभु की शक्ति के बल पर, बिना कष्ट के आनन्द शान्ति पूर्वक छः-आठ घन्टा लगातार स्थिर आसन से आत्मस्मरण परायण समाधिमग्न बैठने की शक्ति प्राप्त होती है।

उस अवस्था में उसके नेत्र बन्द, पलक शान्त, शरीर इन्द्रियाँ बिना हिले-डुले, मन विक्षेप और निद्रा आलस्य से रहित रहता है। और दिन-रात के चौबीस घंटों में से सोलह घन्टे ध्यानावस्थित रहने की शक्ति प्राप्त होती है।

व्यवहार-काल में मन, बुद्धि और इन्द्रियों के साथ अनुकूल-प्रतिकूल संघर्षण होते रहने पर भी वह कामना-

क्रोध, राग-द्वेष, हर्ष-शोकादि द्वन्द्वों से रहित निर्विकार रहता है और उसके हृदय में विलक्षण आनन्द व परम शान्ति सदा-सर्वदा बनी रहती है।

उसे अपने आनन्दमय आत्म स्वरूप के अनन्त, अपार, असीम होने का बोध होता है अर्थात् समष्टि चेतन ब्रह्म में अभेद भाव से युक्त होने का ज्ञान हो जाता है। जब ऐसी विलक्षण स्थिति प्राप्त हो जाए तब समझना चाहिए कि 'शमः' गुण की अनुभवपूर्ण सिद्धि प्राप्त हुई है।

समता सिद्धि के साथ ही आनन्द-शान्ति और शक्ति मुक्ति प्राप्त करने की कामना पूर्ण होने का विधान है।

दमः—दमः शब्द इन्द्रियों को दमन करने का वाचक है। श्री महापुरुष देव के अनुगत इन्द्रियों के संयम युक्त निष्काम भावपूर्वक सेवा और श्री नाम रूप के स्मरण-ध्यान का दीर्घकाल तक अभ्यास करते रहने से कान, उपस्थ (ब्रह्मचर्य), नेत्र, त्वचा, रसना, नासिका और वाणी, इन सात इन्द्रियों पर विजय प्राप्त होने का विधान है।

इन्द्रियाँ पूर्णरूप से निग्रहीत और विषयों के रसा-स्वाद से रहित हो जाती हैं अर्थात् विश्व के समस्त दर्शन-

श्रवण जनित भोग्य पदार्थों की तृष्णा और आसक्ति का अत्यन्त अभाव हो जाता है। इन्द्रियों के साथ जगत् के अनुकूल-प्रतिकूल प्राणी-पदार्थ जनित भोग सामग्रियों के संयोग-वियोग होने पर हृदय में इच्छा-द्वेष, हर्ष-शोकादि विकार नहीं होते।

अन्तःकरण के भाव सर्वथा कामना शून्य सन्तोषमय हो जाते हैं और इन्द्रियाँ हर समय सात्त्विक आहार-व्यवहार में ही प्रवृत रहती हैं। जब ऐसे भाव-आचरण स्वाभाविक होने लगें तब समझना चाहिए कि 'दमः' गुण की अनुभव-सिद्धि प्राप्त हुई है।

स्मृति रहे ! स्वेच्छाचारी इन्द्रियाँ, देह और दिमाग़ की शत्रु हैं और स्वाधीन इन्द्रियाँ, देह और दिमाग़ की मित्र हैं।

उसी भगवत् पदाधिकारी साधक की समस्त इन्द्रियाँ वश में होती हैं जो सदा-सर्वदा कठपुतली के सदृश श्री महापुरुष देव के अनुकूल आचरण करता है। उसके अतिरिक्त राजसी-तामसी मनुष्य अपनी इन्द्रियों द्वारा ही दण्डनीय होते रहते हैं यह भगवत् विधान है।

तपः—तपः गुण सेवा का वाचक है। श्री महापुरुष देव के आदेशानुसार निष्काम भावपूर्वक श्री ध्यानमग्न

सज्जनों की सेवा में रत रहना और यथा ज्ञान-शक्ति राजसी मनुष्यों को सज्जन बनाने में प्रयत्नशील रहना, यह तपः गुण का मुख्य अंग है।

यथा ज्ञान-शक्ति राज विधान अनुसार सत्य-व्यवहार पूर्वक धनादि पदार्थों की आय करना और उक्त पदार्थों को श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु की सम्पत्ति समझ कर निष्कामभाव पूर्वक भगवत् बुद्धि से सुयोग्य पात्रों की सेवा में व्यय करते रहना, तू-तेरा और मैं-मेरा के भावों से रहित होकर अपने हृदय को दया, प्रेम, न्याय आदि गुणों से युक्त बना लेना तथा अपने शारीरिक आहार-विहार में अनावश्यक व्यय न करना।

समय परिस्थिति के अनुसार कोई भी ऊँच-नीच सेवा-कार्य प्राप्त होने पर यथा-शक्ति उत्साहपूर्वक प्रवृत हो जाना तथा लाभ-हानि में राग-द्वेष, हर्ष-शोकादि विकारों से रहित होकर, प्रेम-प्रसन्नतापूर्वक सेवा-कार्य में संलग्न रहने का स्वभाव बना लेना।

प्रत्येक सेवा कार्य करते हुए विराटस्वरूप चराचर भगवान् के संयोग में अहंभाव के संकल्पों का त्याग करते रहना और भगवत् भाव की जाग्रति रखना। श्री महात्मा व परमात्मा देव के नाम का जप और स्वरूप की स्मृति

हर समय बनाए रखना। जब उपरोक्त आचरणों में स्वाभाविक प्रवृत्ति हो जाए, तब समझना चाहिए कि सात्त्विक 'तपः' (सेवा) गुण की सिद्धि प्राप्त हुई है।

विशेष स्मृति रहे !

ध्यान-काल में जो ॐ आनन्दमय प्रभु जी आनन्द-शान्तियुक्त शक्ति का अनुभव कराते हैं वह पूर्ण व स्थायी नहीं है। साधारण ध्यान तो विशेष कर अपनी और दार्शनिकों की श्रद्धा-प्रेम की वृद्धि कराने वाला है। परन्तु दैनिक ध्यानयोग के अभ्यास के साथ-साथ निष्काम-सेवा द्वारा जो आनन्द-शान्ति का विकास होता है वह शीघ्र ही पूर्ण व स्थायी आनन्द-शक्ति की सिद्धि कराने वाला है।

निष्काम-सेवा के आनन्द की सिद्धि उस समय प्रारम्भ होती है जब कि साधक समस्त राजसी-तामसो नामक मानसिक रोगों के संकल्पों को हृदय से त्यागता हुआ केवल सात्त्विक संकल्पों को ही धारण करता है।

निष्काम-सेवा का तत्त्व श्रद्धा-प्रेम की कमी के कारण ही गहन प्रतीत होता है परन्तु यथा ज्ञान-शक्ति महापुरुषों के अनुकूल संग, सेवा और जप-ध्यान, स्वाध्याय का अभ्यास करते-करते समझ में आता रहता है।

शौचम्—शौचम् गुण भीतरी-बाहिरी पवित्रता का वाचक है। भगवत् विधान को भंग करने वाले अज्ञानियों के ज्ञान द्वारा प्राप्त दुःख-अशान्तिमूलक भौतिक अहंता, ममता की सिद्धि हेतु जो कामना आसक्ति पूर्वक दम्भ, धोखा, झूठ, कपट, चोरी, ईर्षा, द्वेषादि पापमय दुर्गुण-दुराचारों को धारण किया जाता है उन कर्मों के परिणाम स्वरूप चिन्ता, क्रोध, भय, रुदन और नाराज़गी आदि मानसिक रोगों द्वारा दण्ड भोगते रहना, यह भीतरी अपवित्रता है।

उपरोक्त समस्त मानसिक विकारों से हृदय का परिशुद्ध हो जाना अर्थात् हर्ष-शोकादि पापमय कलुषित भावों से रहित होकर हृदय का पूर्णरूप से निर्मल हो जाना 'प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति' अ० १८/५४ यह भीतरी पवित्रता की सिद्धि है।

शरीर, वस्त्र, स्थान और पदार्थों को आडम्बर रहित स्वच्छ रखना एवं सात्त्विक आहार सेवन करना, यह बाहिरी शरीर की पवित्रता है।

यथा पात्र सम्पर्क में रहने वाले अथवा आगन्तुक प्रेमीजनों में भगवत् बुद्धियुक्त निष्काम भावपूर्वक प्रेम-प्रसन्नता के साथ सत्य, हित, प्रिय वचनों द्वारा सात्त्विक व्यवहार करना, यह सामाजिक पवित्रता है।

राज्य की मर्यादा अनुसार यथा ज्ञान-शक्ति शारीरिक अथवा दिमागी श्रम द्वारा आर्थिक आय करते हुए श्री महापुरुषों की मर्यादानुसार सत्य-व्यवहार में व्यय करते रहना, यह धनादि पदार्थों की पवित्रता है।

उपरोक्त शारीरिक, आर्थिक, सामाजिक और अध्यात्मिक चारों प्रकार के गुण, ज्ञान, भाव, आचरण श्रद्धा-प्रेम पूर्वक स्वभाव सिद्ध धारण हो जाएँ, तब समझें कि 'शौचम्' गुण की सिद्धि प्राप्त हुई है।

क्षान्तिः—क्षान्ति क्षमा का वाचक है। किसी के अपराधों को अपराध ही न मानना क्षमा का प्रथम अर्थ है। और अपने अज्ञान द्वारा किए हुए अपराधों के लिए उक्त मानव से क्षमा प्रार्थना करना, क्षमा का दूसरा अर्थ है।

हमने यथा ज्ञान-शक्ति किसी का हित किया परन्तु वह नाराज़ हो गया, उस समय अपनी ओर से क्षमा-प्रार्थना करनी अपने लिए हितकर है।

अपराध किसी और ने किया और क्षमा प्रार्थना हमने की यह सदाचार विशेष सात्त्विक है। स्मृति रहे ! गुण-धन ही दिव्य भूषण है परन्तु आकाशी मौसम के और तामसी प्राणियों के सन्मुख पाषाणवत् रहना वर्जित भी है।

गुणों के प्रयोग की व्याख्या पूर्ण रूप से ग्रन्थों में प्रकाशित होनी सम्भव नहीं। ध्यानयोग अभ्यासी मानव के हृदय में तो यथा समय सात्त्विक समाधान होना सम्भव है परन्तु साधारण श्रेणी के साधक श्री गुणवानों के आदेशानुसार गुण-धन का संचय करें।

सर्वत्र भगवत् दर्शन का अभ्यास करने वाले निष्काम-सेवा परायण श्री ध्यानमग्न सत्त्वगुणी मानव क्रोध को सहन करने में समर्थ होते हैं किन्तु गुणातीत श्री ब्राह्मण देव का हृदय तो सर्वथा परिशुद्ध होने के कारण, दुर्जनों के साथ नानात्व होते हुए भी, उनके हृदय में अपराध करने वालों के प्रति वैर-द्वेष के भाव नहीं होते, क्योंकि तामसीजन श्री सात्त्विक मानव के साथ दुरव्यवहार कर, उनका विकास और अपना पतन करते हैं। यह परम्परा का इतिहास है।

स्मृति रहे ! श्री सात्त्विक मानवों की निन्दा-अपमान आदि करने वाले और निरअपराधी राजसी मनुष्यों को कष्ट पहुँचाने वाले ब्रह्म-हत्यारों को श्री न्यायकारी विश्व-पिता ॐ आनन्दमय प्रभु जी द्वारा प्रत्यक्ष में शारीरिक, आर्थिक, मानसिक, सामाजिक और बौद्धिक पांचों प्रकार से दण्ड प्राप्त होते रहने का विधान है। तथा जन्मान्तर में नाना योनियों द्वारा महाघोर दण्ड मिलता है।

यदि अपराधी हृदय से उक्त मानवों के प्रति उचित क्षमा प्रार्थना कर ले तो उसके अपराधों का प्रायश्चित होने का विधान है अर्थात् उसे श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु जी द्वारा दण्ड प्राप्त नहीं होता।

श्री महापुरुषों की शरणागति ही जन्मभर के समस्त पापों से मुक्त होने का विधान है। अर्थात् इस श्लोक में वर्णित श्री ब्राह्मण-पद प्राप्त महापुरुष देव की द्वादश भक्ति करने से अतिशय दुराचारी (महाक्रोधी) मनुष्य भी समस्त पापों से मुक्त होकर, समता सम्पन्न होने का अधिकारी हो जाता है।

श्री महापुरुषों की शरण ग्रहण किए बिना कोई भी व्यक्ति चिन्ता, क्रोध, भय, रुदन और नाराज़गी आदि मानसिक बाणों के दण्ड से बच नहीं सकता। यह मानसिक तीर सर्वज्ञ श्री आनन्दमय प्रभु जी के न्याय विधान द्वारा हृदय को विदीर्ण करते रहते हैं। मानसिक सन्ताप ही ॐ आनन्दमय प्रभु पिता का मुख्य दण्ड विधान है।

स्मृति रहे ! श्री महापुरुषों में क्षमा व समता की पराकाष्ठा होते हुए भी वे जगत का अनिष्ट करने वाले दम्भी-पाखण्डियों (ठगधर्मियों) को और ताड़का, सूपंनखा, बालि, रावण और दुर्योधन जैसे तामसी जनों को

न्यायाधीश-बुद्धि से अथवा चिकित्सा-बुद्धि से दण्ड देना-दिलाना निषेध नहीं अपितु आवश्यक समझते हैं ।

श्री गीता शास्त्र में यथा ज्ञान शक्ति आततायी तामसी प्राणियों का विनाश (*) करना 'धर्मयज्ञ' बतलाया है और दूषित कर्म करने वालों का विनाश न करना पाप बतलाया है ।

(*) तामसी प्रकृति के हिंसक मनुष्यों का वध करना और अन्य हिंसक प्राणियों का विनाश करना हिंसा नहीं अपितु हिंसा रूप रोग की चिकित्सा करना है ।

स्मृति रहे ! राज्य मर्यादा के विरुद्ध किसी प्राणी को स्वयं दण्ड नहीं देना है और मन-बुद्धि को द्वेषी नहीं बना लेना है ।

उपरोक्त विवेचन के अनुसार गुण और ज्ञान को लक्ष्य में रखते हुए अपराधियों के अपराधों को न मानने का संशय रहित अनुभव हो तब समझें कि 'क्षमा' गुण तत्त्व का ज्ञान हुआ है ।

आर्जवम्—मन, इन्द्रियाँ और शरीर की सरलता का नाम आर्जवम् है । मन से सब प्रकार के दाँव-पेच अकड़, दुराग्रह, कुटिलता, वक्रता, चंचलता, अशान्ति, विक्षेप, पागलपन आदि दोषों का सर्वथा अभाव हो जाना, यह मानसिक सरलता है ।

विचार पूर्वक सात्त्विक वाणी उच्चारण करना (अ० १४/१५) तथा इन्द्रियों में चपलता का न होना, यह इन्द्रियों की सरलता है। देह में भी किसी प्रकार की ऐंठ का न होना और शरीर द्वारा अभिमान रहित कोमल, सरल व्यवहार हो, यह शरीर की सरलता है।

मनसा, वाचा, कर्मणा उपरोक्त लक्षणयुक्त सात्त्विक व्यवहार स्वभाव सिद्ध होने लगे तब समझें कि 'आर्जवम्' गुण सिद्धि का ज्ञान हुआ है।

ज्ञानम्—ज्ञानम् शब्द श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु के विधान को जानने का वाचक है और सर्वव्यापी सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान् ॐ आनन्दमय प्रभु के स्वरूप को प्रत्यक्षवत् पहचानने का वाचक है।

भगवत् विधान की और भगवत् स्वरूप की व्याख्या—

(क) तामसी मनुष्यों द्वारा किए जाने वाले कर्मों का और उन कर्मों के दण्ड विधान का ज्ञान होता है। जैसे अति निद्रा, आलस्य, प्रमाद, अकर्मण्यता, झूठ, कपट, धोखा, बेईमानी, रिश्वत, चोरी, डकैती, अभक्ष्य-भक्षण आदि हिंसामय तामसी कर्म हैं और इन्हें करने वाले मनुष्यों का जीवन अवश्य ही चिन्ता, क्रोध, भय, रुदन और नाराज़गी युक्त दुःखमय-अशान्तिमय होगा।

(ख) राजसी मनुष्यों द्वारा किए जाने वाले कर्मों का और उन कर्मों के दण्ड विधान का ज्ञान होता है। जैसे अनावश्यक इन्द्रिय भोग भोगना अथवा अहंता-ममता बुद्धि से स्त्री, पति, कुटुम्ब एवं सन्तानों के मोहजाल में फँसकर उनकी रक्षा वृद्धि हेतु धन, भवन, जमीन आदि पदार्थों का संग्रह करते रहना इत्यादि राजसी कर्म हैं और इन्हें करने वाले मनुष्यों का जीवन क्रमशः शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक, आर्थिक, सामाजिक पाँचों प्रकार की चिन्ताओं से पीड़ित होकर दुःखी-अशान्त होगा।

(ग) श्री सात्त्विक मानव उपरोक्त तामसी और राजसी मनुष्यों के आचरणों से सर्वथा वैराग्य कर श्री ब्राह्मण-पद प्राप्त महापुरुषों की शरण ग्रहण कर उनके अनुकूल संग, सेवा, शुश्रूषा और जप, ध्यान, स्वाध्याय तथा अनुकरण, आज्ञा पालन करते हैं जिसके फल स्वरूप उनका जीवन श्री भगवत् शक्ति सम्पन्न आनन्दमय शान्तिमय होता है।

(घ) स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर की उत्पत्ति, स्थिति तथा विनाश का ज्ञान होता है।

(ङ) समस्त ब्रह्माण्ड में अथवा चराचर में अद्वितीय, अविनाशी, निर्विकार, सर्वज्ञ, सर्वव्यापी, सर्वशक्तिमान,

ज्ञानस्वरूप ॐ आनन्दमय प्रभु को समभाव से व्याप्त देखने का अनुभव होता है और अपने को अविनाशी एवं ॐ आनन्दमय प्रभु से अभिन्न समझने का ज्ञान होता है।

उपरोक्त प्रकार से श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु के विधान का और उनके स्वरूप का ज्ञान होने के साथ-साथ जब ध्यान-समाधि द्वारा ब्रह्मसाक्षात्कार युक्त परमात्मा-आत्मा अर्थात् जीव-ब्रह्म की एकता का संशय रहित अनुभव ज्ञान अपने हृदय से ही हो, तब समझें कि 'ज्ञानम्' सिद्धि की प्राप्ति हुई है (*)।

(*) स्मृति रहे ! स्थूल शरीर को स्वस्थ रखने की विद्या इस गुण विद्या से भिन्न है। अतः शरीर सम्बन्धी ज्ञान का श्रवण-पठन करते रहना और रोगावस्था में उचित चिकित्सा कराते रहना आवश्यक है।

विज्ञानम्—विज्ञानम् शब्द आत्मज्ञान का वाचक है। आत्मा नित्य, चेतन, निर्विकार और अविनाशी है इससे भिन्न स्थूल और सूक्ष्म अर्थात् दृश्य-अदृश्य जो कुछ भी प्रतीत होता है, वह नाशवान्, जड़, विकारी और परिवर्तनशील एवं अनात्मा है। आत्मा के साथ इनका कुछ भी सम्बन्ध नहीं है।

अपने आनन्दमय आत्म-स्वरूप को देह और संसार से सर्वथा असंग, निर्विकार, नित्य और अनन्त, अपार, असीम समझ कर अखण्ड आनन्द में मग्न रहना तथा जन्म से अब तक किए हुए शुभाशुभ कर्म-बन्धन से सदा के लिए मुक्त होने का अनुभव होना, यह आत्मज्ञानी की स्थिति है।

इस प्रकार आत्म-तत्त्व को भली-भाँति समझ लेना और चित्त में नित्य-निरन्तर अमृतमय आत्म-तत्त्व का ही चिन्तन होते रहना, ऐसा अनुभव स्वभाव सिद्ध हो जाए अर्थात् आत्मा का संशय रहित अपरोक्ष ज्ञान हो जाए तब समझना चाहिए कि 'विज्ञानम्' पद की सिद्धि प्राप्त हुई है।

आस्तिक्यम्—आस्तिक्यम् शब्द श्रद्धा का वाचक है। जो मानव इस श्लोक में वर्णित श्री विश्वपिता ॐ आनन्द-मय प्रभु की सम्पत्ति रूप गुण-धन को संग्रह करता है, वह ज्ञानवान् मानव आस्तिक है और जो भौतिक अहंता-ममता की वृद्धि हेतु कामनाओं से तपायमान होकर चिन्ता-क्रोधयुक्त भयातुर रहता है, वह भगवत् विधान को भंग करने वाला अज्ञानी मनुष्य नास्तिक है।

ब्रह्मकर्म—ब्रह्मकर्म शब्द ब्रह्म के आदर्श गुणों का

द्योतक है। ॐ आनन्दमय प्रभु जी स्वयं न्याय पूर्वक अथवा दया और प्रेम पूर्वक जीव मात्र के हित में सतत् प्रवृत्त रहते हैं। उन आदर्श भावों को धारण कर ज्ञान-शक्ति अनुसार समस्त प्राणियों के हित में रत रहना मानव मात्र का कर्तव्य है।

श्री समता सम्पन्न ब्राह्मण देव के मन, बुद्धि और इन्द्रियों द्वारा जो कुछ स्वाभाविक कर्म होते हैं, वे ॐ आनन्दमय ब्रह्म के ही आदर्श गुणों से युक्त विशुद्ध प्रेम भाव से होते हैं। उन दिव्य कर्मों के प्रभाव से सम्पूर्ण जीवों का परम हित होने का विधान है।

भगवत् विधान को भंग करने वाले राजसी-तामसी प्रकृति के देवियाँ-पुरुष, आन्तरिक आनन्द-शक्तिदायक ज्ञान से अनभिज्ञ होने के कारण अपनी सन्तानों को अपने ही सदृश कनिष्ठ भाव-आचरणों की शिक्षा देकर, उनका जीवन भी चिन्ता-क्रोधयुक्त दुःखी-अशान्त बना देते हैं। ऐसे दुःखी-अशान्त मनुष्यों को दुस्तर मायाजाल से मुक्त कर, उन्हें श्री भगवत् पदाधीश बनाते रहना ब्रह्मवेत्ताओं की स्वाभाविक चेष्टा होती है। यह भी 'ब्रह्मकर्म' का भावार्थ है।

स्मृति रहे! तामसी, राजसी, सात्त्विक और गुणातीत

इन चार प्रकार के मानवों द्वारा चार ही प्रकार के भावों से कर्म होते हैं। जैसे—

तामसी मनुष्यों के कर्म धोखे-भाव से होते हैं। राजसी मनुष्यों के कर्म स्वार्थ-भाव से होते हैं। सात्त्विक मानव के कर्म भगवत् सेवा बुद्धि से अर्थात् परमार्थ-भाव से होते हैं। श्री गुणातीत आत्मज्ञानी की भीतरी-बांहिरी देह द्वारा जो कुछ कर्म होते हैं, वे केवल समष्टि चेतन ब्रह्म की प्रेरणा द्वारा विशुद्ध प्रेम-भाव से होते हैं।

याद रक्खें ! श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु के विधान में तामसी मनुष्य डाकू की गणना में हैं, राजसी मनुष्य चोर की गणना में हैं, सात्त्विक मानव पदाधीश हैं और श्री गुणातीत महापुरुष ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के युवराज हैं।

ज्ञान करें ! तामसी मनुष्यों को श्री दण्डदायक प्रभु जी क्रोधाग्नि से उबालते हैं। राजसी मनुष्यों के हृदय में श्री न्यायकारी प्रभु जी चिन्ताग्नि प्रज्वलित रखते हैं। सात्त्विक मानव को श्री सुहृदतामय प्रभु जी ध्यानयोग जनित आनन्द-शान्ति प्रदान करते हुए उनको सदा-सर्वदा प्रसन्न रखते हैं। श्री गुणातीत महापुरुष ॐ श्री प्रेममय आनन्दमय महाप्रभु जी का आनन्द-शक्ति सम्पन्न 'समता' स्वरूप है।

स्मृति रहे ! ब्रह्म का साक्षात्कार होने से ही 'ब्रह्म-कर्म' के तत्त्व-रहस्य का पूर्ण ज्ञान होता है।

स्वभावजम्—स्वभावजम् शब्द स्वाभाविक क्रिया का वाचक है। उपरोक्त दस सूत्रों की जो व्याख्या की है उन सात्त्विक गुण, ज्ञान, भाव, आचरणों को धारण करने का श्री ब्राह्मणदेव का सहज स्वभाव हो जाता है।

श्री ब्राह्मण-पद प्राप्त महापुरुषदेव के भीतरी-बाहिरी दोनों शरीरों से होने वाले सम्पूर्ण कर्म सीमित अहंता और सीमित ममता के संकल्पों के त्याग पूर्वक 'मैं-कर्ता' और 'मैं-भोक्ता' के अभिमान से रहित व्यापक अहंता व व्यापक ममता भाव से ज्ञान पूर्ण होते हैं।

श्री ब्राह्मणदेव के हृदय में विश्व से धन, जन, मान-बड़ाई, सेवा, पूजा, प्रतिष्ठा आदि के प्राप्त होने पर अथवा न होने पर तथा नष्ट होने पर एवं प्रतिकूल प्राप्त होने पर न ग्रहण करने की इच्छा होती है और न त्याग करने की ही इच्छा होती है।

श्री ब्राह्मणदेव प्रत्येक परिस्थिति में लोभ, भय, राग, द्वेष, हर्ष, शोकादि द्वन्द्वों से रहित सम, शान्त व प्रसन्न रहते हैं। श्री ब्राह्मण पद प्राप्त महात्मा द्वारा 'सर्वभूतहिते रताः' अथवा 'सुहृदम् सर्वभूतानाम्' गुणयुक्त सेवा कार्य

स्वाभाविक होते रहते हैं। इत्यादि 'स्वभावजम्' स्थिति के लक्षरा हैं।

एव—एव शब्द निश्चय का बोधक है। श्री महापुरुष भगवान् का कथन है कि यह विलक्षरा स्थिति श्रद्धा-प्रेम युक्त पुरुषार्थ के बल पर अवश्य होती है, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं।

विश्व के मानव समाज में जो श्रीमान् पुरुष अथवा श्री भगवती देवियाँ उपरोक्त दस सूत्रों में वर्शित गुरा, ज्ञान, भाव, आचररा युक्त हैं वह 'ब्राह्मरा-पद' को प्राप्त हैं। शास्त्रों में इस परमपद प्राप्त महापुरुषों को संत, ब्राह्मरा, संन्यासी, महात्मा, पण्डित, भगवान्, ब्रह्मवेत्ता, मर्यादा-पुरुषोत्तम, महाराज, मानसिक वैद्यराज, स्वामी जी आदि नामों से सम्बोधित किया है।

स्मृति रहे! आत्म तत्त्वज्ञ समदर्शी श्री ब्राह्मरा देव अपने में जन्म से ब्राह्मरा और शास्त्र रटन से पण्डित होने का अभिमान नहीं रखते।

श्री ब्राह्मरा-पद की अन्तिम स्थिति प्राप्त होने पर ध्यान-समाधि करने की कामना-आसक्ति नहीं रहती किन्तु लोक दर्शनार्थ यथा समय ध्यान-समाधि का प्रदर्शन होता रहता है। यह श्री महापुरुषों द्वारा होने वाली मौन सेवा है।

विचार करें ! श्री गीता अ० १८/४२ में प्रकाशित आदर्श गुण, प्रभाव के त्यागी जो कामी-क्रोधी पण्डित-संन्यासी हैं उनकी प्रतिष्ठा के कारण भगवत् आनन्द-शक्तिदायक 'मानसिक चिकित्सा' की विद्या लुप्त हुई है।

तामसी मनुष्यों को यश-मान, प्रतिष्ठा अथवा भिक्षा-दान देते रहने के दण्ड स्वरूप भारत देश के मनुष्य तामसी बुद्धि युक्त, दुर्गुण-दुराचारी, चिन्तित-क्रोधित व भयातुर हुए हैं।

जो मनुष्य दो-चार घन्टा भी नेत्र बन्द करके मान-सिक शान्तिपूर्वक जप-ध्यान करने में असमर्थ हैं उनके मुखार्विन्दों से श्रवण किया हुआ धार्मिक ज्ञान अथवा मंत्र जाली सिक्का मात्र है। उन स्वाङ्गी वाचाल मनुष्यों को पण्डित-महात्मा और ज्ञानी-भक्त न समझ करें ॐ आनन्दमय प्रभु के जेल निवासी राजसी-तामसी मनुष्य समझें।

ध्यानयोग रहित मनुष्यों से प्रेम करना चिन्ता-क्रोध की अग्नि में उबलते रहने का साधन है, यह ॐ आनन्दमय प्रभु जी का अनादि सिद्ध न्याय विधान है।

श्री ब्रह्मज्ञानी ब्राह्मणदेव के लक्षण और उन्हें प्राप्त आनन्द-शक्ति के प्रभाव का विस्तार ज्ञान श्री गीता अ० ३/१७; ५/१६ से २६; ६/१८ से २२ व २७ से ३२

में प्रकाशित है। इससे सम्बन्धित ज्ञान पृष्ठ ९९ से १११ तक प्रकाशित है।

श्री ब्राह्मण-पद अभिलाषी मानव मन रूपी शत्रु से सदैव ही सावधान रहें। जब तक अपने हृदय में उपरोक्त समस्त लक्षण पूर्ण रूप से धारण न हो जाएँ तब तक श्री महापुरुष देव के अनुगत् संग, सेवा और जप-ध्यान आदि की अवहेलना अथवा त्याग न करें। अन्यथा पुनः अहंता-ममता की इच्छा से नाराज़गी के संकल्पों की वृद्धि होकर द्वेष की अथवा चिन्ता की जाग्रति होनी सम्भव है। साधक के लिए स्वतन्त्रता पतन कारक होगी।

विशेष स्मृति रहे!

बालक-बालिकाएँ "श्री ब्राह्मण-पद" प्राप्त करने के विशेष पात्र हैं।

बालक-बालिका, युवा, नर-नारी।
ब्राह्मण-पद के हैं सभी अधिकारी॥

श्री ब्राह्मणपद अभिलाषी श्रद्धालु भक्त इस गुण वर्द्धक भगवत् विधान का प्रतिमाह मनन-विचार पूर्वक अध्ययन करेंगे। ॐ शान्तिमय

श्री गीता दर्शन

(सर्व-शास्त्रमयी गीता)

किन-किन गुण, ज्ञान, भाव, आचरणों को धारण करने से मनुष्य प्रेम-प्रसन्नता व समता-सन्तोषयुक्त आनन्द-शक्ति सम्पन्न बनता है और किन-किन गुण, ज्ञान, भाव, आचरणों को धारण करने से मनुष्य चिन्ता, क्रोध, भय, रुदन युक्त दुःखमय-अशान्तिमय होकर निर्भागी बनता है ?—इस भगवत् विधान का पूर्ण ज्ञान श्री गीता शास्त्र में विद्यमान है ।

मनुष्य का कर्तव्य और अकर्तव्य क्या है ? धर्म और अधर्म क्या है ? धर्मात्माओं के और पापात्माओं के लक्षण क्या हैं अर्थात् श्री भगवत् पदाधीश सात्त्विक 'देव मानव' की पहचान क्या है और ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के जेल निवासी राजसी 'असुर मनुष्य' की पहचान क्या है तथा ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के कालापानी निवासी तामसी 'राक्षस मनुष्य' की पहचान क्या है ? इस विधान का ज्ञान श्री गीता में है ।

पण्डित किसका वाचक है ? संन्यासी किसे कहते हैं ? ब्राह्मण के क्या लक्षण हैं ? क्षत्रिय की क्या पहचान है ? इत्यादि जानने योग्य विषयों का पूर्ण ज्ञान सर्व-शास्त्रमयी गीता में विद्यमान है जिसके मुख्य-मुख्य श्लोकों का विवरण निम्नाङ्कित है।

श्री गीता के मुख्य श्लोकों का विवरण

❀ अध्याय २ के मुख्य श्लोक ❀

(*) धारण करने योग्य—श्लोक ७, ११, १४-१५, २२, २३ से २५; ३८, ४०, ४१।

(*) भाग्यवान् बनने की विधि अर्थात् सेवायोग का ज्ञान —श्लोक ४७ से ५१ (कर्मयोग)।

(*) महाभाग्यवान् के लक्षण—श्लोक ५४ से ५६, ६४-६५, ६६ से ७२।

(*) सेवायोग और ध्यानयोग के त्यागी केवल शास्त्र कंठस्थ करने वाले वक्ताओं के निर्भागी बनने की विधि —श्लोक ४२ से ४४।

(*) अहंता और ममता बुद्धि से इन्द्रिय भोगों द्वारा निर्भागी बनने की विधि—श्लोक ६२, ६३।

❀ अध्याय ३ के मुख्य श्लोक ❀

(*) शिक्षाप्रद श्लोक—१७-१८; १६ से २१; २५, ३० से ३२; ३४, ३६ से ४३।

❀ अध्याय ४ के मुख्य श्लोक ❀

(*) मनुष्य कर्तव्य का ज्ञान—श्लोक १६ से २३।

(*) भगवत् विधान के अनुकूल सात्त्विक यज्ञों का ज्ञान —श्लोक २६ से ३३।

(*) श्री महापुरुषों की शरणागति की विधि और महात्माओं के ज्ञान को धारण करने का माहात्म्य —श्लोक ३४ से ४२।

❀ अध्याय ५ के मुख्य श्लोक ❀

(*) असल संन्यासी के लक्षण—श्लोक ३।

(*) महत्त्वपूर्ण ज्ञान एवं सेवायोग और ध्यानयोग का फल —श्लोक १० से १२; १७ से २६; २७ से २६।

❀ अध्याय ६ के मुख्य श्लोक ❀

(*) असल संन्यासी और नकली संन्यासी के लक्षण —श्लोक १।

(*) मन रूपी शत्रुको दमन करनेका आदेश—श्लोक ५-६।

(*) मन को दमन कर मित्र बनाने का फल—श्लोक ७ से ९।

(*) ध्यानयोग की विधि एवं परमानन्द और परम शान्ति युक्त आत्म ज्ञान की प्राप्ति का ज्ञान—श्लोक ११ से ३२, ४०, ४७।

❀ अध्याय ७ के मुख्य श्लोक ❀

(*) मनन-विचार करने योग्य—श्लोक १, ३, १४ से १८, २०, २७ से ३०।

❀ अध्याय ८ के मुख्य श्लोक ❀

(*) श्री महापुरुषों की प्रेम भक्ति का विधान और वरदान—श्लोक ५ से ८; १४-१५।

❀ अध्याय ९ के मुख्य श्लोक ❀

(*) राजविद्या का महत्त्व अर्थात् गुणविद्या का प्रभाव एवं गुणविद्या को अध्ययन करने का ज्ञान—श्लोक २, १३-१४; २२, २७-२८; २९ से ३४।

(*) कामी-क्रोधी अश्रद्धालु मनुष्यों की दुर्गति होने का शाप—श्लोक ३, १२।

❀ अध्याय १० के मुख्य श्लोक ❀

(*) श्री महापुरुष भगवान् की प्रेम-भक्ति करने की विधि एवं फल का ज्ञान—श्लोक ४-५, ९ से ११।

❀ अध्याय ११ के मुख्य श्लोक ❀

(*) ॐ आनन्दमय प्रभु का परम पद प्राप्त करने की विधि एवं वरदान अर्थात् महापुरुष श्री कृष्ण भगवान् के सदृश पदाधिकारी बनने का विधान—श्लोक ५४-५५।

❀ अध्याय १२ के मुख्य श्लोक ❀

(*) श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु की मर्यादा पालन करने की विधि—श्लोक १ से ५; ६ से ८।

(*) ॐ आनन्दमय भगवान् के भक्तों के लक्षण—श्लोक १३ से २०।

❀ अध्याय १३ के मुख्य श्लोक ❀

(*) श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु के युवराज-पद प्राप्त करने की विधि—श्लोक ७ से ११।

स्मृति रहे ! यह उपासना करने योग्य सर्वोत्तम विधान है। इस गुण वर्द्धक ज्ञान का त्याग करने वाले मनुष्य ॐ आनन्दमय प्रभु की जेल रूप चिन्ता-क्रोध की

अग्नि में उबलते हुए दुःखी-अशान्त रहेंगे। इस विधान के अतिरिक्त कामी-क्रोधी पण्डे-पुजारियों का और पण्डित-संन्यासियों का बतलाया हुआ धर्म-कर्म आनन्द-शान्तिदायक अथवा मुक्ति दायक नहीं अपितु जाली सिक्का है।

(*) श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु के स्वरूप का एवं प्रभाव का ज्ञान—श्लोक १२ से १८।

(*) जीवात्मा के पुनर्जन्म का ज्ञान—श्लोक १९ से २१।

(*) आत्मज्ञान प्राप्त करने की विधि—श्लोक २४-२५।

(*) विशुद्ध आत्मा के प्रभाव का ज्ञान—श्लोक २२-२३; २६ से ३४।

❁ अध्याय १४ के मुख्य श्लोक ❁

(*) चौदहवें अध्याय के प्रारम्भ में श्री महापुरुष भगवान् ने विश्व में जो आध्यात्मिक ज्ञान पहले रचा जा चुका है उससे अति उत्तम और परम श्रेष्ठ ज्ञान को कथन करने की प्रतिज्ञा की है तथा इस ज्ञान को धारण कर अपने ही समान भगवत् शक्ति सम्पन्न होने का वरदान दिया है—श्लोक १-२; १९-२०।

यह परम सिद्धि की स्थिति अनुभवगत अनिर्वचनीय है जिसका अन्य कहीं भी वर्णन नहीं है।

(*) श्री भगवत् पदाधीश सात्त्विक मानव के अनुकूल संग सेवा करते हुए सात्त्विक मनन-विचारों को धारण करने के अभ्यास से आनन्द-शक्तियुक्त ॐ आनन्दमय प्रभु के पदाधीश बनने का विधि-विधान—श्लोक ५ से १८।

(*) भगवत् विधान को भंग करने वाले राजसी और तामसी मनुष्यों के अनुकूल संग सेवा करते हुए राजसी-तामसी मनन-विचारों को धारण करने के अभ्यास से क्रमशः जीवन दुःखमय-अशान्तिमय होने का विधि-विधान—श्लोक ५ से १८।

(इन श्लोकों का पृथक-पृथक विवरण पृष्ठ १४६ से १४८ तक प्रकाशित है)।

(*) श्री महाभाग्यवान् अर्थात् गुणातीत महापुरुषों के लक्षण—श्लोक २१ से २५।

(*) श्री महापुरुषों की प्रेम भक्ति के प्रभाव से गुणातीत पद को प्राप्त होने का विधान—श्लोक २६-२७।

❀ अध्याय १५ के मुख्य श्लोक ❀

(*) आनन्दमय और दुःखमय जीवन का ज्ञान—श्लोक ३ से ५; ७ से ११; १९-२०।

पाँचवें श्लोक में ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के परम पद की प्राप्ति का ज्ञान है। यह ज्ञान सम्पूर्ण धार्मिक ग्रन्थों का सार है अर्थात् वेद-वेदान्तों का राजा ज्ञान है।

पाँचवें श्लोक में वर्णित लक्षण ही असल ब्राह्मण-पण्डित के लक्षण हैं और यही लक्षण असल संन्यासी-महात्मा के हैं। इन लक्षणों का त्यागी मनुष्य धर्मात्मा नहीं उसे पापात्मा समझना चाहिए।

❀ अध्याय १६ के मुख्य श्लोक ❀

(*) श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु की मर्यादा पालन करने वाले देव मानवों की पहचान का ज्ञान और श्री देव-देवाङ्गनाओं के प्रति वरदान—श्लोक १ से ३, ५।

(*) स्वाँगी, वाचाल, बनावटी धर्मात्माओं के लक्षणों का ज्ञान और अहंता-ममता युक्त भोग-बुद्धि से धन-जन आदि पदार्थों को संग्रह करने वाले अज्ञानियों के लक्षणों का ज्ञान तथा अन्य समस्त असुर श्रेणी के राजसी-तामसी मनुष्यों को पहचानने का ज्ञान —श्लोक ४ से २१।

इन श्लोकों में राजसी-तामसी मनुष्यों के प्रति श्री दण्डदायक प्रभु की चेतावनी का और शाप का भी वर्णन है।

इस अध्याय में श्री भगवत् पदाधीशों को 'देव' नाम से सम्बोधित किया है और ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के कारागृह निवासी मनुष्यों को 'असुर' नाम से कहा है।

❀ अध्याय १७ के मुख्य श्लोक ❀

(*) आहार-व्यवहार आदि से श्रेष्ठ, कनिष्ठ और महाकनिष्ठ मनुष्यों को पहचाननें का ज्ञान—श्लोक ५-६; ७ से १०; १४ से १७; १८ से २२; २८।

इस अध्याय में मनुष्यों की तीन श्रेणियाँ बतलाकर उनके आचरणों द्वारा उनकी पहचान बतलाई है अर्थात् कार्य को देखकर कारण की पहचान बतलाई है।

स्मृति रहे ! श्री सात्त्विक मानव को भगवत् पदाधीश समझाया है। राजसी मनुष्यों को ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के जेल निवासी और तामसी मनुष्यों को कालापानी निवासी के सदृश समझाया है।

(इस १७ वें अध्याय के श्लोकों का पृथक-पृथक विवरण पृष्ठ १४६ से १५१ तक प्रकाशित है)।

❀ अध्याय १८ के मुख्य श्लोक ❀

(*) मानव सेवा के त्यागी साधु-संन्यासियों को तामसी समझाने का और सेवा अनुरागी, कर्म फल के त्यागी,

सच्चे साधु-भक्तों को सात्त्विक बताने का ज्ञान —श्लोक १ से १२।

(*) श्री भगवत् विधान को धारण करने वाले सात्त्विक (अधिष्ठानं-अध्यक्षता में) महात्माओं के आज्ञाकारी भक्तों का भगवत् अनुकूल सात्त्विक मन-बुद्धि और ज्ञान बनता है तथा भगवत् विधान को भंग करने वाले राजसी-तामसी (अधिष्ठानं-अध्यक्षता में) पापात्माओं के आज्ञाकारी मनुष्यों का भगवत् विरुद्ध राजसी-तामसी मन-बुद्धि और ज्ञान बनता है। जैसा करे संग वैसा बने मन-बुद्धि और ज्ञान ! इस विधान का ज्ञान —श्लोक १३ से १८।

(इसका फल श्लोक १६ से ३६ तक है।)

(*) धर्मात्मा-महात्मा की, पापात्मा की और महापापात्मा की पक्की परीक्षा का ज्ञान—श्लोक १६ से ३६।

इसमें श्रेष्ठ मानव को सात्त्विक बतलाया है, कनिष्ठ मनुष्य को राजसी बतलाया है और महाकनिष्ठ मनुष्य को तामसी बतलाया है।

स्मृति रहे ! दीर्घकाल से भारत देश में बहुत से धार्मिक ग्रन्थ रचे हुए हैं परन्तु अधिकांश ग्रन्थ जाली होने के कारण उनके द्वारा बनावटी धर्मात्मा लोग यश, मान,

प्रतिष्ठा की प्राप्ति करते हुए दान-भिक्षा के पात्र बनते आए हैं।

उन जाली ग्रन्थों के आधार पर पापात्मा लोग महात्मा प्रसिद्ध हो जाते हैं और वह बनावटी गुरु लोग सच्चे ध्यानयोगी महात्मा को दम्भी-पाखण्डी अथवा नास्तिक घोषित कर देते हैं।

उक्त जाली ग्रन्थों में शूद्र को ब्राह्मण और ब्राह्मण को शूद्र माना जाता है। असाधु को साधु और साधु को असाधु समझा जाता है। देव को राक्षस और राक्षस को देव कहा जाता है।

इस प्रकार की अनेकों माया-मारीचिकाओं को अर्थात् चक्रान्तियों को देखकर महापुरुष श्री कृष्ण भगवान् ने गीता के प्रायः सभी अध्यायों में मनुष्यों की पहचान बतलाई है। परन्तु यह मानव परीक्षा का विषय अति गहन है। इसलिए इस अठारहवें अध्याय में पुनः श्लोक १९ से ३९ तक छः-छः श्लोकों में विस्तार पूर्वक मनुष्यों की पहचान बतलाई है।

(इन श्लोकों का पृथक-पृथक विवरण पृष्ठ १५३ पर प्रकाशित है।

उपरोक्त जाली ग्रन्थों के कारण ही भारत देशवासियों का जीवन दूर-देशवासियों की अपेक्षा अति क्लेशमय होता

आया है। प्राचीन काल के क्लेशों का और वर्तमान के क्लेशों का वर्णन करना सम्भव नहीं तथापि सांकेतिक ज्ञान पृष्ठ ७३ से ८५ तक प्रकाशित है।

(*) ॐ आनन्दमय प्रभु के विधान को धारण करने की विधि एवं वरदान का ज्ञान—श्लोक ५० से ५५।

स्मृति रहे ! उपरोक्त भगवत् विधान श्री महापुरुष भगवान् द्वारा बतलाया हुआ है। इस अमृतमय परमपद दायक गुणधर्म का त्याग कर, जो धर्म के नाम से धार्मिक कर्म किए जाते हैं वे बनावटी धर्म होने के कारण अधर्म की वृद्धि करने वाले हैं। अर्थात् उपरोक्त गुण उपासना के अतिरिक्त विश्व के समस्त धर्म-कर्म अज्ञानी मनुष्यों द्वारा रचे हुए होने के कारण कामना युक्त चिन्ता-क्रोध की वृद्धि करने वाले हैं।

(*) ॐ आनन्दमय प्रभु के विधान को गुणविद्या कहा है। उस गुणविद्या के अध्ययन हेतु, गुणविद्या के विद्वान् श्री महापुरुषों की शरण ग्रहण करने का विधान है—श्लोक ५६ से ५८; ६४ से ६६; ६७ से ६९; ७२-७३।

श्री गीता का सार तत्त्व

श्री गीता शास्त्र के रचयिता महापुरुष भगवान् भगवत् विधान के पारदर्शी थे। श्री आपके सिद्धान्त से

भगवत् पदाधीश सात्त्विक महात्मा के अनुकूल संग, सेवा और जप-ध्यान करते हुए, उनके गुण वर्द्धक ज्ञान को धारण करने के प्रभाव से प्रत्येक मानव का जीवन सुख-शान्ति युक्त आनन्द-शक्ति सम्पन्न होने का विधान है।

भगवत् विधान को भंग करने वाले राजसी और तामसी मनुष्यों के अनुकूल संग-सेवा करते हुए उनके भाव-आचरणों को धारण करने से प्रत्येक मनुष्य का जीवन चिन्ता, क्रोधयुक्त दुःखमय-अशान्तिमय होने का विधान है।

श्री गीता का यह सिद्धान्त, आम और बबूल के बीजों के अन्दर वृक्ष होने के सदृश, सत्य है। इस अनादि सिद्ध सिद्धान्त का भविष्य में भी परिवर्तन होना सम्भव नहीं। अस्तु,

स्मृति रहे! मानव चार श्रेणी के भावयुक्त होते हैं जैसे गुणातीत, सात्त्विक, राजसी और तामसी। इनकी पहचान का ज्ञान अ० १४, १६, १७, १८ के निम्नाङ्कित श्लोकों में वर्णित है।

भगवन्! इन चार अध्यायों में वर्णित श्लोकों के अनुसार अपने सहित अपनी सन्तानों की परीक्षा करें कि आप लोग अपने ज्ञान चक्षुओं को बन्द करके किस गुण-ज्ञान के प्रवाह में बहते जा रहे हैं।

❀ अध्याय १४ का विवरण ❀

ॐ आनन्दमय भगवान् के पदाधीशों को पहचानने का ज्ञान और श्री प्रभु के जेल निवासी मनुष्यों को पहचानने का ज्ञान अध्याय १४ के निम्नाङ्कित श्लोकों में प्रकाशित है ।

विवरण ☟	(१) ॐ श्री प्रभु के पद के दाताओं की पहचान ☟	(२) ॐ श्री प्रभु के जेल के दाताओं की पहचान ☟	(३) ॐ श्री प्रभु के कालापानी के दाताओं की पहचान ☟
सात्त्विक और राजसी-तामसी मनुष्यों से प्रेम करने का फल	श्लो० ६ ...	७ ...	८

(१४७) विवरण		(१)		(२)		(३)
सात्त्विक और राजसी-तामसी मनुष्यों के ज्ञान में श्रद्धा करने का फल	श्लो०	६	...	६	...	६
श्रद्धा प्रेम का परिवर्तन करने से पुनः सुख से दुःख और दुःख से सुख होने का ज्ञान	"	१०	...	१०	...	१०
अपना हृदय सत्त्वगुणी है अथवा रजोगुणी-तमोगुणी है, उसको पहचानने का ज्ञान	"	११	...	१२	...	१३

(१४८) विवरण		(१)		(२)		(३)
☞		☞		☞		☞
मृत्यु के पश्चात् किस श्रेणी के मनुष्यों की क्या गति होगी, उसका ज्ञान	श्लो०	१४	...	१५	...	१५
जीवित अवस्था में ही अपने-अपने कर्मों का फल अवश्य भोगना होगा	"	१६ से १८	...	१६ से १८	...	१६ से १८
आनन्द-शान्ति और शक्ति-मुक्ति के दाता श्री आचार्य देव के लक्षण	"	२१ से २५	...	...	...	...

❀ अध्याय १६ का विवरण ❀

अध्याय १६ के श्लोकों का विवरण पृष्ठ १४० में प्रकाशित हुआ है।

❀ अध्याय १७ का विवरण ❀

विवरण		(१) श्री भगवत् पदाधीश की पहचान	(२) भगवत जेल निवासी की पहचान	(३) श्री प्रभु के काला-पानी निवासी की पहचान
सात्त्विक और राजसी-तामसी मनुष्यों को उनकी श्रद्धा से पहचानने का ज्ञान	श्लो०	१ से ४	१ से ४	१ से ४

(१५०) विवरण		(१)	(२)	(३)
तामसी धर्मियों को उनकी तपस्या के आचरणों से पहचानने का ज्ञान	श्लो०	...	... ...	५-६
सात्त्विक और राजसी-तामसी मनुष्यों को भोजन विषयक प्रियता से पहचानने का ज्ञान	"	७-८ ...	९ (*) ...	१०
यज्ञ के आचरणों से सात्त्विक और राजसी-तामसी मनुष्यों को पहचानने का ज्ञान	"	११ ...	१२ ...	१३

(*) दीपन-पाचन कारक नमक मसालों को ज्ञानपूर्वक सेवन करना हितकर है।

(१५१) विवरण	(१)		(२)		(३)
☞	☞		☞		☞
तप के आचरणों से सात्त्विक और राजसी-तामसी मनुष्यों को पहचानने का ज्ञान	श्लो० १४ (*) से १७	...	१८	...	१९

(*) भगवन् ! स्मृति रहे, इस १४ वें श्लोक का हिन्दी अर्थ जाली धर्मियों के अनुकूल किया हुआ है)।

दान के आचरणों से सात्त्विक और राजसी-तामसी मनुष्यों को पहचानने का ज्ञान	" २०	...	२१	...	२२

(*) सुहृदता गुण युक्त सन्तोषी समतावान (सात्त्विक-ध्यानमग्न)
सास और माता होती है आनन्द शक्ति की दाता ।

(*) ममता अहंकार युक्त कामी-क्रोधी (राजसी-तामसी-शोकमग्न)
माता और सास कराती है दुःख अशान्ति का विकास ।

❀ अध्याय १८ के श्लोकों का ज्ञान ❀

स्मृति रहे ! अ० १४ और १७ में जो ज्ञान पद और जेल के दाताओं की पहचान के लिए लिखा है, उस ज्ञान में और निम्नाङ्कित परिवर्तन में केवल समझाने के लिए शब्दों का अन्तर किया है ।

विवरण ☟	(१) समता-प्रसन्नतायुक्त आनन्द-शान्ति के दाताओं की पहचान ☟	(२) चिन्ता-नाराज़गी युक्त दुःख-अशान्ति के दाताओं की पहचान ☟	(३) क्रोध-रुदन युक्त दुःख-अशान्ति के दाताओं की पहचान ☟
अकर्मण्य रह कर जीवन बिताने वाले साधु-संन्यासियों का ज्ञान } श्लो०	...	... ८	... ७

विवरण

विवरण		(१)		(२)		(३)
ॐ आनन्दमय भगवान् का पद प्राप्त करने का विधि-विधान	श्लो० ४ से ६, ६ से १२		...		...	...
ज्ञान द्वारा मनुष्यों की पहचान	"	२०	...	२१	...	२२
आचरण द्वारा मनुष्यों की पहचान	"	२३	...	२४	...	२५
गुण द्वारा मनुष्यों की पहचान	"	२६	...	२७	...	२८
बुद्धि द्वारा मनुष्यों की पहचान	"	३०	...	३१	...	३२
धारणा द्वारा मनुष्यों की पहचान	"	३३	...	३४	...	३५
सुख द्वारा मनुष्यों की पहचान	"	३६-३७	...	३८	...	३९

नर से नारायण पद प्राप्त करने का ज्ञान

ॐ आनन्दमय प्रभु पिता की मर्यादा पालन कर प्रत्येक मनुष्य नर से नारायण बनने का अधिकारी है।

परम दयालु महाभाग्यवान् महात्मा श्री कृष्ण भगवान् ने मानव मात्र को अपने ही समान बनने का विधि-विधान निम्नाङ्कित श्लोकों में बतलाया है।

अध्याय ८/१४-१५; अ० ९/२७ से २९, ३४; अ० १०/९, १०; अ० ११/५५; अ० १२/६ से ८; अ० १४/२; अ० १८/६५-६६।

श्री महापुरुषों की पहचान का ज्ञान

श्री गीता अ० २/५४ से ५९ तथा अ० १४/२१ से २५ तक के आदर्श युक्त, शुद्ध सत्त्वगुण से सम्पन्न, समाधिमग्न, गुणातीत श्री देव-देवाङ्गनाएं ॐ आनन्दमय प्रभु के साकार स्वरूप हैं अर्थात् श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु की आनन्दमयी-शान्तिमयी चेतन प्रतिमाएँ हैं।

श्री महापुरुष भगवान् के शरण होने की विधि-विधान का ज्ञान निम्नाङ्कित श्लोकों में है।

अध्याय २/७, ६१; अ० ३/२१, ३० से ३२; अ० ४/३४ से ४२; अ० ९/२७-२८; अ० १०/९ से ११;

अ० ११/५५; अ० १२/१-२, ६ से ८ व ६ से २०; अ० १३/७ से ११; अ० १४/२६-२७; अ० १८/५६ से ५८; ६४ से ६६, ७३।

गुणविद्या के श्रद्धालु छात्र-छात्राएँ अर्थात् दिव्य गुण उपासक मानव अपने जीवन को आनन्द-शान्ति सम्पन्न और अपनी आत्मा को भगवत् पद-शक्ति सम्पन्न बनाने के उद्देश्य से उपरोक्त श्लोकों में प्रकाशित श्री भगवत् विधान को धारण करें।

भगवन् ! गीता के प्रत्येक श्लोक का अर्थ उच्चारण करते समय "हे अर्जुन" के स्थान पर अपने नाम को आदर्श करके पढ़ें जैसे "हे आनन्दमोहन" और ऐसा समझते रहें कि ॐ आनन्दमय प्रभु पिता मुझे ही आदेश दे रहे हैं।

भगवन् विशेष स्मृति रहे ! श्री गीता शास्त्र में श्री विश्वपिता ॐ आनन्दमय प्रभु का विधान पूर्ण है परन्तु उसे समझना सुगम नहीं। प्रत्यक्ष फल दायक श्री विश्व-शान्ति ग्रन्थ श्री गीता शास्त्र का युवराज है जो हिन्दी भाषा में होने के कारण सुगमता पूर्वक समझ में आता है।

ॐ शान्तिमय

नम्र निवेदन

श्रीमान् पुरुष समाज व भगवती देवी समाज तथा छात्र-छात्राओं के प्रति प्रार्थना है कि—

(१) मनः शान्ति रूप ध्यानयोग (*) द्वारा आनन्द और शक्ति की प्राप्ति हेतु भगवत् विधान से पूर्ण, आवरण पृष्ठ ४ पर प्रकाशित, ग्रन्थों को श्री विश्वशान्ति आश्रम से प्राप्त कर अपने जीवन को आनन्द-शक्तियुक्त गुण सम्पन्न और ज्ञान सम्पन्न बनावें।

(*) सेवायोग और ध्यानयोग द्वारा प्राप्त लाभों का वर्णन पृष्ठ ७ से १६ तक प्रकाशित है।

---

(२) श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ द्वारा शिक्षित नेत्र बन्द करके ब्रह्मतेज युक्त शान्त मुद्रा से भजन-ध्यान करने वाले श्री ध्यानमग्न साधकों (श्री भगवती देवी स्वरूपा हो अथवा श्रीमान् पुरुष स्वरूप हो) का यदि किसी अन्य नगर में आपको दर्शन हो जाए तो आप उनका चार दिन सत्संग करें (*)। आपको मानसिक शान्ति वर्द्धक ध्यानयोग जनित आनन्द-शक्ति का अनुभव होगा जो योगशक्ति का

अनिर्वचनीय चमत्कार है। अन्यथा आप कहोगे कि "मैं पढ़ता सुनता हूँ बहुत ग्रन्थ और गीता परन्तु मन की परेशानी के सन्मुख (बिना ध्यानयोग के) हूँ रीता का रीता।"

(*) सावधान ! जो मानव एक-दो घन्टा भी नेत्र बन्द करके भजन-ध्यान का अभ्यास करने में असमर्थ हैं उनको कथन मात्र का ही श्री विश्वशान्ति आश्रम का भक्त समझना है।

भगवन् ! प्रति दिन दो-चार घन्टा ध्यानयोग का अभ्यास किए बिना, केवल धन और जन द्वारा, चित्त की प्रसन्नता होनी सम्भव नहीं। ध्यान लगने के पश्चात् आप स्वयं ही कथन करेंगे कि अब तक के मेरे धार्मिक शब्द और ज्ञान-दाता प्रमादी थे।

देश सेवार्थ प्रार्थना

देश सेवार्थ प्रार्थना है कि श्रद्धा और शक्ति अनुसार वाणी, लेखनी तथा तन, धन द्वारा प्रत्यक्ष आनन्द-शक्ति दायक भगवत् कार्यालय श्री विश्वशान्ति आश्रम की सेवा का विकास कर बनावटी धर्मियों की शिक्षा द्वारा पीड़ित 'दरिद्रधाम व कलहधाम' भारत देश को 'सम्पत्तिधाम और गुणधाम' बनाने में सहयोगी बनें (*)।

(*) इससे सम्बन्धित ज्ञान (भाग १) में विश्व सेवार्थ प्रार्थना नामक लेख में प्रकाशित है ।

ज्ञान करें ! देश के भाग्य विधाता छात्र-छात्राएँ मानसिक रोगों की वृद्धि करने वाले ईर्षा-द्वेष युक्त कामी-क्रोधी मनुष्यों के तामसी ज्ञान को धारण कर परिवार सहित देश को उबाल रहे हैं ।

पाठशालाओं की भयानक परिस्थितियों को सुधारने के लिए भगवत् विधान से पूर्ण, **"योग शक्ति-युक्त"** श्री विश्वशान्ति ग्रन्थ (भाग १) पृष्ठ संख्या १४४ में प्रकाशित है । यह ग्रन्थ, काम, क्रोध, ईर्षा, द्वेष और चिन्ता-नाराजगी आदि १२५ मानसिक रोगों की शान्ति का अचूक नुस्खा है ।

यदि हमारे वचनों में आपका विश्वास हो तो श्री ग्रन्थ छपाने के हेतु श्री विश्वशान्ति आश्रम से पत्र व्यवहार करने की प्रार्थना है, श्री ग्रन्थ आपके ही नाम से प्रकाशित करा दिया जायगा ।

श्रीमान् जी ! भगवत् विधान के प्रचार-प्रसार हेतु मनिआर्डर द्वारा मासिक सेवा प्रदान कर अपनी उन्नति का अनुभव करें ।

ॐ शान्तिमय

भारत का भाग्य उदय होगा

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।

(गीता अ० २/४७)

युक्तः कर्मफलं त्यक्त्वा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम्।

(गीता अ० ५/१२)

व्यक्तिगत सम्पत्ति को देशगत करने के विधान से अकर्मण्यता का, प्रमाद का, राज विधान के विरुद्ध आर्थिक आय करने का और सन्तानों की वृद्धि का अन्त होगा।

अनर्थ मूलक व्यक्तिगत सम्पत्ति के त्याग से भ्रष्टाचारों का अन्त होगा और राज आज्ञानुसार श्रम का विकास होगा, श्रम के विकास से 'भगवत् कृपा होगी, भगवत् कृपा से भारत का भाग्य उदय होगा (*)। अन्यथा ठगधर्मी और ठगधनी देश का विध्वंस कराएँगे।

ॐ शान्तिमय

(*) भगवत् कृपा से आकाशी मौसम (वर्षा, वायु, शीत, गरमी) हितकारी होगा। (कृ० पृ० उ०)

भारत की मर्यादा

श्री भगवान् का विधान क्या है ?

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।

(गीता अ० २ श्लो० ४७)

भोजन, वस्त्र, भवन, चिकित्सा आदि कोशाधीश के आदेशानुसार स्वीकार हों । शिक्षा और सेवा नगर प्रमुख के आदेशानुसार हो ।

सेवा कार्यों के अतिरिक्त तन, धन, जन, भूमि भवन आदि सम्पत्ति पर व्यक्तिगत अधिकार न हो ।

उपरोक्त ॐ आनन्दमय भगवान् का विधान सुख, शान्ति और आनन्द, शक्ति वर्द्धक है पूर्ण विधि और वरदान का ज्ञान श्री गीता अ० २/४७ से ७२ तक प्रकाशित है ।

युक्तः कर्मफलं त्यक्त्वा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम्

(श्री गीता अ० ५/१२

दिव्य वाणी

(१) हे श्री आनन्दमय प्रभो ! दिमागी कोश में अमृत, आनन्द और शान्ति के दाता मित्र कौन हैं ?

☞ (क) परमार्थी प्रेम और (ख) आत्म प्रेम ।

(२) हे श्री शान्तिमय प्रभो ! दिमागी कोश में विष, वायु और अग्नि दायक शत्रु कौन हैं ?

☞ (क) कामी प्रेम (ख) लोभी प्रेम (ग) क्रोधी प्रेम ।

(३) हे श्री शान्तिमय प्रभो ! शरीर में विष, वायु और अग्नि जन्य रोगों की वृद्धि करने वाले शत्रु कौन हैं ?

☞ मनमाना आहार-विहार और छूत ।

(४) हे श्री शान्तिमय प्रभो ! भारतदेश में भोजन सम्बन्धी वनस्पति को दुर्बलता दायक और स्वल्प मात्रा में क्यों तैयार कर रहे हैं ?

☞ शठबुद्धि युक्त मिथ्या वाणी के और कलह-क्रोध के श्रद्धावान् नारी-नर कठिन दण्ड के पात्र हैं ।

हे प्रिय आत्मन् ! दिमागी रोग नाशक और ध्यान अमृत दायक ☞ ॐ आनन्दमय ॐ शान्तिमय महामंत्र जपें तथा दिमागी सम्पत्ति सहित पद-प्रभाव दायक श्री विश्वशान्ति (भाग १) अवश्य प्राप्त करें ।

ॐ शान्तिमय

श्री ग्रन्थों का प्रभाव और नाम

निम्नांकित ग्रन्थ

(१) १२५ दिमागी रोग नाशक हैं (२) अखण्ड आनन्द दायक हैं (३) स्थाई शान्ति दायक हैं (४) ॐ आनन्दमय प्रभु पिता के पद दायक हैं (५) दिव्य गुण युक्त सदाचार दायक हैं (६) ब्रह्मसाक्षात्कारयुक्त आत्म ज्ञान दायक हैं और (७) मोक्षदायक हैं। अतः ध्यान अमृत दायक श्री ग्रन्थों को अवश्य प्राप्त करें।

श्री ग्रन्थों का नाम	पृ० सं०
(१) श्रीविश्वशान्ति ग्रन्थ (भाग १) ...	१४४
(२) श्रीविश्वशान्ति ग्रन्थ (भाग २) ...	१६०
(३) श्री मानव भाग्य विधाता ...	६४
(४) श्री आनन्द कीर्तन (भजन संग्रह)	३२
(५) श्री अनुभव अंक	३२
(६) ब्रह्मज्ञान क्रम संख्या (५) और (६)	१६

भगवन् ! (क) [illegible] का ज्ञान इस ग्रन्थ के द्वितीय पृष्ठ [illegible] । (ख) श्री ग्रन्थ प्राप्त करने का पता [illegible] २ पर प्रकाशित है। ॐ